संस्कृत-विहारः

सम्पादक
नरोत्तमदास स्वामी
एम. ए (संस्कृत-हिन्दी)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

प्रथम सस्करण, जुलाई १९५६
द्वितीय सस्करण, जून १९५७

मूल्य १-८-० या १ रु. ५० पैसे

मुद्रक । नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, दिल्ली

प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य के चुने हुए अंशो का यह संकलन हाईस्कूल एवं तत्सम-कक्ष परीक्षाओ के लिए तैयार किया गया है। संकलन करने में दो बातो को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया है—

१ संस्कृत साहित्य के प्रमुख साहित्यकारो की उत्कृष्ट कृतियो के उत्कृष्ट और रोचक अंशो से छात्रो का परिचय हो जाय।

२ संकलित अंश ऐसे हो जो भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठताओ को हृदयंगम करने मे और चरित्र-निर्माण मे सहायक हो।

प्रथम उद्देश्य की पूर्ति के लिए रामायण, महाभारत जैसे आर्ष ग्रंथो, कालिदास, भास, अश्वघोष, दंडी, बाण, भवभूति, जयदेव जैसे ख्यातनामा लेखको की रचनाओ, तथा कथासरित्सागर, पंचतंत्र, हितोपदेश, भोज-प्रबंध, सिंहासन-द्वात्रिंशिका और पुरुष-परीक्षा जैसी लोकप्रिय कृतियो के चुने हुए अंश संकलित किये गये हैं। उपयुक्त सरल अंशो के अभाव तथा स्थान की कमी के कारण भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि कई-एक श्रेष्ठ साहित्यकारों को स्थान नही दिया जा सका।

ब्राह्मण और उपनिषद् साहित्य की एक झलक के रूप में ऐतरेय ब्राह्मण और तैत्तिरीयोपनिषद् के दो सरल अंश भी संगृहीत किये गये है।

जैन विद्वानो ने संस्कृत-साहित्य की बहुत बडी सेवा की है। पाठ्य-ग्रंथो में उनकी ओर उदासीनता दिखायी जाती रही है। इस पुस्तक में हरिषेण के बृहत्कथाकोष के एक अंश का संकलन करके इस त्रुटि का किसी अंश में परिहार करने का प्रयत्न किया गया है। सिंहासन-द्वात्रिंशिका वाला अंश भी शंकर के जैन रूपान्तर के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। महाकवि अश्वघोष बौद्ध संस्कृत-साहित्य का प्रतिनिधित्व करते है।

पाठो का पूर्वापर-क्रम कठिनता की मात्रा के अनुसार रखा गया है,

कठिनता की मात्रा क्रमश बढती गयी है। प्रत्येक पाठ के प्रारभ मे मूल ग्र
और उसके लेखक का सक्षिप्त परिचय दिया गया है। आशा की जाती है वि
इससे विद्यार्थियो का कौतूहल जागृत होगा और वे इस सबध में और भ
जानने और पढने को तत्पर होगे। उनकी सहायता के लिए विशेप पठन
की सामग्री का निर्देश पाठो के अत में किया गया है।

पाठो के साथ अभ्यास दिये गये हैं जिनमें पाठ के विपय, शब्दको
व्याकरण तथा रचना से सबध रखनेवाले प्रश्न वर्गीकृत करके दिये गये है।
परिशिष्ट में अर्थ-सबधी तथा दूसरी कठिनाइयो को दूर करनेवा
टिप्पणियाँ दी गयी है।

आशा है यह सकलन जिनके लिए तैयार किया गया है उनके लिए
उपयोगी सिद्ध होगा।

सकलन-का

सूचिका

अवतरणिका

कवि-प्रशंसा-पद्यानि

(१) वाल्मीकि—

कवीन्दुं नौमि वाल्मीकिं यस्य रामायणीं कथाम् ।
चन्द्रिकामिव चिन्वन्ति चकोरा इव साधवः ॥

(२) व्यास—

नमः सर्व-विदे तस्मै व्यासाय कवि-वेधसे ।
चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥

महाभारत—

धर्मे ह्यर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ! ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ॥

(३) भास और कालिदास—

भासो हासः कवि-कुल-गुरुः कालिदासो विलासः ।
केषां नैषा कथय कविता-कामिनी कौतुकाय ॥

(४) कालिदास—

पुरा कवीनां गणना-प्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठित-कालिदासा ।
अद्यापि तत्तुल्य-कवेरभावाद् 'अनामिका' सार्थवती बभूव ॥

अभिज्ञान-शाकुन्तलम्—

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला ॥

(५) दण्डी—

कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः ॥
जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाभवत् ।
कवी इति ततो व्यासे कवयस् त्वयि दण्डिनि ॥

(६) बाण—

प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ॥

कादम्बरी—

कादम्बरी-रस-भरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयसे जनोऽयम्

(७) कालिदास-भारवि-दण्डी-माघ—
उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ- गौरवम् ।
दण्डिन. पद-लालित्य माघे सन्ति त्रयो गुणा' ॥

(८) भवभूति—
भवभूतेः सम्बन्धाद् भूधर-भूरेव भारती भाति ।
एतत्कृत-कारुण्ये किमन्यथा रोदिति ग्रावा ॥
उत्तररामचरितम्—
उत्तरे राम- चरिते भवभूतिर् विशिष्यते ॥

१४ विद्या

चतुर्वेदा षडङ्गानि मीमासा न्याय इत्यपि ।
धर्म-शास्त्रं पुराणं च प्रोक्ता विद्याश् चतुर्दश ॥

६ वेदाङ्ग

छन्द. पादौ, करौ कल्प, निरुक्त श्रोत्रमुच्यते ।
ज्योतिष लोचने, शिक्षा घ्राण, व्याकरण मुखम् ॥

६ शास्त्र

न्यायो वैशेषिक चैव साङ्ख्य योगस् तथैव च ।
मीमासा चैव वेदान्त एतानि दर्शनानि षट् ॥

विशेष पठन के लिए ग्रथ तथा निर्देश-ग्रथ

१ बलदेव उपाध्याय : सस्कृत साहित्य का इतिहास (शारदा मदिर, बनारस)
२ बलदेव उपाध्याय : सस्कृत वाङ्मय (,,)
३ नरोत्तमदास स्वामी : नवीन सस्कृत-व्याकरण (रमेश बुकडिपो, जयपुर)
४ रूपचद्रिका . (चौखभा सस्कृत सीरीज, बनारस)
५ अमरकोष, मणिप्रभा टीका ।
६ सस्कृत-अग्रेजी-हिंदी प्रैक्टिकल डिक्शनरी (रामनारायण लाल, इलाहाबाद)

मङ्गलम्

(१)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव ! ॥

(२)

यं शैवाः समुपासते शिव इति, ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धा बुद्ध इति, प्रमाण-पटवः कर्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैन-शासन-रताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं नो विदधातु वाञ्छित-फलं त्रैलोक्य-नाथो हरिः ॥

अभ्यास

१. शब्द-कोष-संबंधी

(१) निम्नलिखित शब्दों के अर्थ लिखो और उनके पर्याय-शब्द, जितने बता सको उतने, बनाओ—
द्रविण, पटु, विदधातु, वाञ्छित ।

(२) हरि शब्द के जितने अर्थ जानते हो उन सब को बताओ ।

२. व्याकरण-संबंधी

(१) संधि-विच्छेद करो—
बन्धुश्च, शिव इति, ब्रह्मेति, अर्हन्नित्यथ, सोऽयम् ।

(२) समास-विग्रह करो और समास का नाम वताओ—
देव-देव, प्रमाण-पटव , वाञ्छित-फल, त्रैलोक्य-नाथ ।

(३) प्रकृति-प्रत्यय अलग-अलग वताओ—
शैवा , वेदान्तिन , वाञ्छित ।

(४) उपसर्ग, धातु और तिडन्त प्रत्ययो को अलग-अलग वताओ—
समुपासते, विदधातु ।

३. रचना-सवधी

(१) प्रथम श्लोक के मुख्य भाव को सक्षेप मे सस्कृत मे लिखो ।

४ विषय-सवधी

(१) द्वितीय श्लोक का केन्द्रीय भाव क्या है ?

(२) जिन और बुद्ध कौन थे ?

(३) द्वितीय श्लोक में तीन दर्शनो का उल्लेख हुआ है, छहो दर्शनो के नाम वताओ ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. सूक्ति-सुधाकर—(गीता प्रेस, गोरखपुर)

: २ :

शालिवाहन-कथा

(सिहासन-द्वात्रिंशिकाया.)

[भारत के राजाओ मे उज्जयिनी के नरेश विक्रमादित्य ने लोक-मानस को सबमे अधिक मुग्ध किया। उसके सबध मे सैकडो कथाएँ जनता मे प्रसिद्ध हुई जिनमे उसके महान् त्याग, अपूर्व औदार्य और अद्भुत शौर्य के नानारगी चित्र अकित हुए है। इन कथाओ के सग्रह समय-समय पर लेखबद्ध हुए। ऐसे सग्रहो मे विक्रम-चरित्र, पचदण्ड-चरित्र, वेताल-पचविंशतिका और सिहासन-द्वात्रिंशिका विशेष प्रसिद्ध है। सस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत, अपभ्रश, राजस्थानी, गुजराती, हिन्दी आदि भाषाओ मे इनके विविध रूपान्तर बने और लोक-प्रिय हुए।

सिंहासन-द्वात्रिंशिका में विक्रमादित्य के अद्भुत त्याग और पराक्रम की ३२ कथाएँ सकलित है। धारा के अधिपति भोज को एक बार पृथ्वी मे गडा हुआ विक्रमादित्य का सिहासन मिला। उसे साफ करवाकर जब वह उस पर बैठने लगा तो सिहासन की पहली पुतली ने उसे रोका और कहा कि इस सिहासन पर वही व्यक्ति बैठ सकता है जिसमे विक्रमादित्य का सा अद्भुत त्याग और पराक्रम हो। यह कहकर उसने विक्रमादित्य के महान् त्याग की एक कथा सुनायी। दूसरे दिन दूसरी पुतली ने दूसरी कथा सुनायी। इस प्रकार बत्तीस दिनो तक बत्तीस पुतलियो ने कथा सुनाकर भोज को सिहासन पर बैठने से रोका। अन्त मे भोज ने सिहासन को वही फिर गडवा दिया जहाँ वह मिला था।

सकलित अश सिहासन-द्वात्रिंशिका की २४वी कथा से लिया गया है। इसमे विक्रमादित्य के प्रतिद्वन्द्वी शालिवाहन के बचपन की एक कथा है जिससे बालक शालिवाहन की बुद्धिमत्ता का अच्छा परिचय मिलता है।]

आसीत् श्रीमन्नृपति-विक्रमादित्यस्य राज्ये पुरन्दरपुर नाम नगरम् । तत्र कश्चिन्महा-धनिक श्रेष्ठी न्यवसत् । स च कोटि-ध्वज । तस्य चत्वार पुत्रा आसन् । अन्यदा तेन देहावसान-समये पुत्रा प्रोक्ता —भो वत्सा ! युष्माभि सभूय स्थेयम् । यदि स्थातु न पारयेत तदा मदीय-शयन-स्थाने मञ्चाधस्ताद् युष्मन्नामाङ्किताश् चत्वार कलशा सन्ति ते प्रत्येक ग्राह्या । तेन क्रमेण च सम्पत्ति-विभाजन कृत्वा सुखिनो भवेत ।

ततस्तस्मिन् पर-लोक गते चत्वारो भ्रातरो मासमेकमेकत्र स्थिता । ततस्तेषा स्त्रीणा परस्पर कलहो जात । ततस्तैर्विचारितम्—किमर्थ कलह क्रियते ? पित्रा जीवतैव चतुर्णा विभाग कृतोऽस्ति । तन् मञ्चाध स्थितान् विभागान् गृहीत्वा विभक्ता सन्त सुखेन तिष्ठाम । इत्युक्त्वा यावन्मञ्चाध खनन्ति तावच्चतुर्णा पादानामधस्ताच् चत्वार कलशा दृष्टा । तेषा मध्ये एकस्मिन् मृत्तिका द्वितीयेऽङ्गारास् तृतीयेऽस्थीनि चतुर्थे तु तुषा स्थिता ।

एवमेतत् कलश-चतुष्टय दृष्ट्वा ते चत्वारो भ्रातरो विस्मय गता परस्परमवदन्—अहो ! अस्मत्-पितृ-कृत-विभागस्य परमार्थ केन ज्ञायते ? ततस्तैर्बहवो लोका पृष्टा । पर कोऽपि परमार्थ न जानाति । अन्यदा राज-सभाया गत्वा सर्वो वृत्तान्तो निवेदित पर तत्रापि निर्णयो न जात ।

तदनन्तरमेकदा ते प्रतिष्ठानपुर गता । तत्र तत्रत्याना महाजनाना पुरतस् तद्-वृत्तान्तो भणित । तत्रापि न केनापि निर्णय कृत ।

अथ तस्मिन् नगरे शालिवाहनो नाम कश्चित् कुमारो मात्रा सह कुम्भकार-गृहे तिष्ठति स्म । स तद्विवाद-स्वरूपं श्रुत्वा महाजन-सभायामागत्य प्राह—भो सभ्या ! को वादः ? किमत्र दुर्बोधम् ? किमाश्चर्यं च ? तत्कथयत । तदाकर्ण्य तेषामेकोऽवदत्—एते चत्वारः कस्यापि धनिकस्य पुत्राः । एतेषां पित्रा जीवता एव विभागः कृतो यथा एकस्मिन् कलशे मृत्तिका, अन्यस्मिन्नङ्गाराः, अपरस्मिन्नस्थीनि, चतुर्थे तु तुषाः । अस्य विभागस्य निर्णयं कर्तुं कोऽपि न शशाक ।

तच्छ्रुत्वा शालिवाहन उवाच—एतद्वादस्य निर्णयमहं करिष्ये । तदा सर्वे साश्चर्यं विलोकमाना स्थिताः । स प्राह—यस्य पित्रा मृत्तिका दत्ता तस्य सर्वा भूमिः, यस्य तुषा दत्तास्तस्य सकलं धान्यम्, यस्यास्थीनि तस्य सर्वे चतुष्पदादि-पशवः, यस्य चाङ्गारा दत्तास्तस्य सुवर्णादयः सप्त धातवः । एवं शालिवाहनेन तेषां पितृकृत-विभागस्य तात्पर्यं वर्णितम् ।

एतदाकर्ण्य सर्वे प्रमुदिताः । शान्तो विवादः । तेऽपि धनिक-कुमाराः कृतार्थाः स्व-गृहं गताः ।

अभ्यास

(१)

(१) **निम्नलिखित शब्दों के अर्थ बताओ—**

देहावसान, संभूय, पारयेत, परमार्थ, मात्रा, महाजन, सभ्य, आकर्ण्य, वाद ।

(२) कहना अर्थ की वाचक जितनी धातुएँ जानते हो उनको बताओ ।

(२)

(१) सधि-विच्छेद करो—

ततस्तस्मिन्, तैर्विचार्ग्निम्, कल्हो जात, कोऽपि, जीवतैव, इत्युक्त्वा, तत्रापि, तच्छ्रुत्वा।

(२) समास-विग्रह करो—

देहावमान-समये, परमार्थ, कुम्भकार-गृहे, सुवर्णादय।

(३) उपसर्ग, धातु तथा प्रत्ययो को अलग-अलग करके बताओ—

न्यवसन्, सभूय, स्थेयम्, स्थातु, जीवता, विलोकमाना।

(४) जाति (लिंग), वचन तथा विभक्ति बताओ—

चत्वार, मामम्, धातव, ते।

(५) ये रूप किस धातु के और किस काल के है—

आसन्, कथय, शशाक।

(३)

(१) वाच्य-परिवर्त्तन करो—

वादस्य निर्णयमह करिष्ये, शालिवाहनेन तात्पर्य वर्णितम्, तदाकर्ण्य तेषामेकोऽवदत्, परमार्थ केन ज्ञायते।

(२) वाद को सुनकर शालिवाहन ने जो कहा उसे सस्कृत में लिखो।

(४)

(१) विक्रमादित्य और शालिवाहन के विषय में क्या जानते हो?

(२) ऐसी ही कोई और कथा लिखो। (बालक चन्द्रगुप्त की कथा)

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ जीवानद—द्वात्रिशत्-पुत्तलिका-सिहासनम्।

२ क्षेमकर—सिहासन-द्वात्रिंशिका।

३ सिहासन-बत्तीसी—(वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई)।

: ३ :

मूषक-श्रेष्ठि-कथा

(कथासरित्सागरात्)

[भारतीय कथा-साहित्य मे बृहत्कथा का बडा सम्माननीय स्थान है। उसकी रचना आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व गुणाढ्य कवि ने पैशाची नामक प्राकृत भाषा मे की थी। उसमे भारतवर्ष की प्राचीन लोक-कथाओ का बडा सुन्दर और विशाल सग्रह था।

सस्कृत मे उसके तीन भाषान्तर हुए—१ बुद्धस्वामी कृत बृहत्कथा-श्लोकसग्रह, २ सोमदेव कृत कथासरित्सागर और ३ क्षेमेंद्र कृत बृहत्कथा-मजरी। इनमें कथासरित्सागर सबसे विस्तृत है। उसमें लगभग २४००० श्लोक है। इस प्रकार परिमाण में वह वाल्मीकीय रामायण के बराबर है। बृहत्कथा अब इन सक्षिप्त अनुवादो के रूप मे ही उपलब्ध है, मूल पैशाची-ग्रथ लुप्त हो चुका है।

सकलित अश कथासरित्सागर की छठी तरग से उद्धृत किया गया है। इसमे दिखाया गया है कि एक चतुर पुरुष अपने अनवरत अध्यवसाय द्वारा किस प्रकार तुच्छातितुच्छ साधन से क्रमश धनार्जन करता हुआ समृद्धि-शाली बन जाता है।

इससे मिलती-जुलती एक कथा बौद्ध जातको में चुल्ल-सेट्ठि-जातक में आयी है जिसके अन्त में यह गाथा है—

अप्पकेनापि मेधावी पाभतेन विचक्खणो।
समुट्ठापेति अत्तानं अणुं अग्गीव सन्धमं॥

अल्पकेनापि मेधावी प्राभृतेन विचक्षण ।
उत्थापयति चात्मानम् अण्वग्निमिव सधम ॥]

(१)

अन्योन्य निज-वाणिज्य-कला-कौशल-वादिनाम् ।
क्वचिच्च वाणिजा मध्ये वणिगेकोऽब्रवीदिदम् ॥१॥
अर्थे सयमवानर्थान् प्राप्नोति कियदद्भुतम् ?
मया पुनर्विनैवार्थं लक्ष्मीरासादिना पुरा ॥२॥

(२)

गर्भस्थस्य च मे पूर्वं पिता पञ्चत्वमागत ।
मन्मातुश्च तदा पापैर् गोत्रजै सकल हृतम् ॥३॥
तत मा तद्-भयाद् गत्वा रक्षन्ती गर्भमात्मन ।
तस्थौ कुमारदत्तस्य पितृ-मित्रस्य वेश्मनि ॥४॥
तत्र तस्याश्च जातोऽह साध्व्या वृत्ति-निबन्धनम् ।
ततश्चावर्धयत् सा मा कृच्छ्र-कर्माणि कुर्वती ॥५॥
उपाध्यायमथाभ्यर्थ्य तयाकिञ्चन्य-दीनया ।
क्रमेण शिक्षितश्चाह लिपि गणितमेव च ॥६॥

(३)

वणिक्पुत्रोऽसि तत् पुत्र ! वाणिज्य कुरु साम्प्रतम् ।
विशाखिलाख्यो देशेस्मिन् वणिक् चास्ति महा-धन ॥७॥
दरिद्राणा कुलीनाना भाण्ड-मूल्य ददाति स ।
गच्छ याचस्व त मूल्यमिति मातान्नवीच्च माम् ॥८॥
ततोऽहमगम तस्य सकाश सोऽपि तत्क्षणम् ।
इत्यवोचत् क्रुधा कञ्चिद् वणिक्पुत्र विशाखिलः ॥९॥

मूषको दृश्यते योऽय गत-प्राणोऽत्र भू-तले ।
एतेनापि हि पण्येन कुशलो धनमर्जयेत् ॥१०॥

दत्तास्तव पुनः पाप ! दीनारा वहवो मया ।
दूरे तिष्ठतु तद्-वृद्धिस् त्वया तेऽपि न रक्षिताः ॥११॥

तच्छ्रुत्वा सहसैवाह तमवोच विशाखिल ।
गृहीतोऽय मया त्वत्तो भाण्ड-मूल्याय मूषकः ॥१२॥

इत्युक्त्वा मूषक हस्ते गृहीत्वा सपुटे च तम् ।
लिखित्वाऽस्य गतोऽभूवमह सोऽप्यहसद् वणिक् ॥१३॥

(४)

चणकाञ्जलि-युग्मेन मूल्येन स च मूषकः ।
मार्जारस्य कृते दत्तः कस्यचिद् वणिजो मया ॥१४॥

कृत्वा ताश्चणकान् भृष्टान् गृहीत्वा जल-कुम्भिकाम् ।
अतिष्ठ चत्वरे गत्वा छायाया नगराद् वहिः ॥१५॥

ततः श्रान्तागतायाम्भः शीतल चणकाश्च तान् ।
काष्ठ-भारिक-सङ्घाय स-प्रश्रयमदामहम् ॥१६॥

एकैकः काष्ठिकः प्रीत्या काष्ठे द्वे द्वे ददौ मम ।
विक्रीतवानह तानि नीत्वा काष्ठानि चापणे ॥१७॥

ततः स्तोकेन मूल्येन क्रीत्वा ताश्चणकास् ततः ।
तथैव काष्ठिकेभ्योऽहमन्येद्युः काष्ठमाहरम् ॥१८॥

(५)

एव प्रतिदिन कृत्वा प्राप्य मूल्य क्रमान्मया ।
काष्ठिकेभ्योऽखिल दारु क्रीत तेभ्यो दिन-त्रयम् ॥१९॥

अकस्मादथ संजाते काष्ठच्छेदेऽति-वृष्टिभिः ।
मया तद् दारु विक्रीतं पणानां बहुभिः शतैः ॥२०॥
तेनैव विपणिं कृत्वा धनेन निज-कौशलात् ।
कुर्वन् वाणिज्यं क्रमशः संपन्नोऽस्मि महा-धनः ॥२१॥
सौवर्णो मूषकः कृत्वा मया तस्मै समर्पितः ।
विशाखिलाय सोऽपि स्वां कन्यां मह्यमदात् ततः ॥२२॥
अत एव च लोकेऽस्मिन् प्रसिद्धो मूषकाख्यया ।
एवं लक्ष्मीरियं प्राप्ता निर्धनेन सता मया ॥२३॥

(६)

तच्छ्रुत्वा तत्र तेऽभूवन् वणिजोऽन्ये स-विस्मयाः ।
धीर्न चित्रीयते कस्मादभित्तौ चित्र-कर्मणा ॥२४॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ बताओ—

अन्योन्य, संयमवान्, आसादिता, पञ्चत्वं आगतः, वेश्म, आकिञ्चन्य, भाण्ड-मूल्य, संपुटे, स-प्रश्रय, अदाम्, अन्येद्युः, चित्रीयते, अभित्तौ ।

(२) पर्याय शब्द बताओ—

दृश्, कुशल, हस्त, कृते, धी ।

(२)

(१) सन्धि-विच्छेद करो—

क्वचिच्च, वणिगेकः, ततोऽहम्, सोऽप्यहसद् वणिक्, लक्ष्मीरियम् ।

(२) समास-विग्रह करो—

मन्मातुः, तद्भयात्, पितृ-मित्रस्य, आकिञ्चन्य-दीनया ।

(३) वर्त्तमान-कृदन्त और भूत कृदन्त बनाओ—
आ+गम्, हृ, रक्ष्, कृ, शिक्ष्, दा, जन्, सिध्।

(४) ये रूप किस काल और किस पुरुष के हैं—
अब्रवीत्, अवर्धयत्, कुरु, अगमम्, याचस्व, दृश्यते, अर्जयेत्, अहसत्, अतिष्ठम्, आहरम्।

(३)

(१) वाच्य-परिवर्त्तन करो—
श्लोक ११, श्लोक २२।

(२) मृत मूषक को लेकर जाने के पश्चात् मूषक-श्रेष्ठी ने किस प्रकार धनार्जन किया यह सस्कृत में लिखो।

(४)

(१) साधनो के अभाव में भी मूषक-श्रेष्ठी को धनार्जन में क्यो सफलता मिली? उसके किन गुणो के कारण सफलता सभव हुई?

(२) क्या आप कोई ऐसा कार्य करते है जिससे आपको अपने कुटुम्ब की आर्थिक स्थिति सुधारने में सहायता मिलती हो?

(३) इस कथा से तत्कालीन समाज के चित्र पर क्या प्रकाश पडता है?

(४) निर्धन व्यक्तियो के अपनी बुद्धि द्वारा धनवान् बनने के कोई उदाहरण ज्ञात हो तो बताओ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. कथा-सरित्सागर—(निर्णयसागर प्रेस)।
२. कथा-सरित्सागर—(जीवानद कृत गद्य रूपातर)
३. कथा-सरित्सागर—(हिन्दी अनुवाद नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ)।
४. कथा-सरित्सागर—सक्षिप्त हिन्दी अनुवाद (इडियन प्रेस)।
५. चुल्ल-सेट्ठि-जातक—जातक, हिन्दी अनुवाद, भाग १ (हिन्दी साहित्य सम्मेलन)।

: ४ :

जन्म-बर्बर-कथा

(पुरुष-परीक्षाया)

[सस्कृत के बालोपयोगी नीति-सबधी कथा-साहित्य मे पुरुप-परीक्षा की बहुत प्रसिद्धि है । इसकी रचना मिथिला के प्रसिद्ध विद्वान् और कवि विद्यापति ने विक्रम की पद्रहवी शताब्दी मे की थी । विद्यापति मिथिला के निवासी थे । मिथिला के महाराजा शिवसिंह के वे घनिष्ठ मित्र थे। हिन्दी के महाकवियो मे उनका प्रमुख स्थान है । उनकी पदावली अपनी भावपूर्णता, मधुरता और मर्मस्पर्शिता मे अनुपमेय है ।

हिन्दी (मैथिली) के अतिरिक्त उनने मस्कृत और अपभ्रश में भी बहुत सी रचना की । अपभ्रश-रचनाओ में कीर्त्तिलता तथा सस्कृत-रचनाओं मे पुरुप-परीक्षा, लिखनावली और भू-परिक्रमा साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है ।

सकलित अश पुरुप-परीक्षा मे लिया गया है । उसमे बताया गया है कि जन्म से निर्बुद्धि कितना ही शास्त्राभ्यास कर ले अन्त में मूर्ख-का-मूर्ख ही रहता है । जन्म-मूर्ख की यह कथा बहुत प्रसिद्ध कथा है जो जनता में अनेक रूपो में प्रचलित है । विद्यापति ने इसे सरल और नाटयात्मक शैली में प्रस्तुत किया है ।]

आसीत् कौशाम्बी नाम नगरी । तस्या देवधर-नामा गणक प्रतिवसति स्म । तस्य शान्तिधरो नाम पुत्रो बभूव । स च जन्म बर्बर पित्रा पाठ्यमान पदार्थ नाधिगच्छति । तथा हि—

पिता ददाति पुत्रेभ्य सर्वस्व परितोषवान् ।
न तु भाग्य च बुद्धिग् च दातु तेनापि शक्यते ॥

ततो महता समयेन महता च पितु श्रमेण स शुकवदभ्यस्त-शास्त्रो बभूव। तत स गणको राज्ञे त पुत्रमुपनिनाय। त दृष्ट्वा राजोवाच—अये देवधर-गणक! किमधीतमनेन पुत्रेण? गणक उवाच—देव! गणित-शास्त्रमधीतम् अनेन, प्रश्न च जानाति। तदनन्तर स-कौतुको राजा सुवर्णाङ्गुलीयकमेक मुष्टौ कृत्वा तमुवाच—अये गणक-कुमार! जानाहि तावत् कि वस्तु मम मुष्टौ वर्तते? ततो गणक-पुत्र कठिनीमादाय शास्त्रानुसारेण गणयामास। गणनया च विदित्वाब्रवीद्—देव! धातु-रूप वस्तु देवस्य मुष्टौ वर्तते। राजोवाच—सवादिनी वाक्। गणक-पुत्रः पुनरुवाच—मण्डलाकृति वस्तु विद्यते। राजोवाच—समुदित वच। गणक-पुत्र पुनरब्रवीत्—गुरु द्रव्य, मध्ये शून्य च भवति। राजोवाच—साधु, गणक-कुमार! साधु, भद्र जानासि, कथय कथय।

ततो राज-प्रशसया जात-रभसस् त्वरित कथयामि इति गणनामपहाय निजोहेन कथयामास—देव! पाषाण-घरट्टक-मण्डल विद्यते देवस्य मुष्टि-गर्भे।

राजा विहस्योवाच—अये गणक! तव पुत्र शास्त्रे कृताभ्यासोऽस्ति किन्त्वबुद्धि। यावद्दूर शास्त्रानुसारिण्या गणनया कथित तावत् सवाद एव, अन्यच्च स्वकीयोहेन यदुक्त तत्र विसवादो वृत्त। अरे जन्मान्ध! त्व न जानासि घरट्टक-मण्डल महत् पाषाण-मय मनुष्य-मुष्टि-गर्भे न सभवति इति? तस्मादवश्य बुद्धि-हीनोऽसि।

इत्यभिधाय राजा तस्मै किञ्चिद् वस्तु दत्वा तमाज्ञप्तवान्।

गुरु निषेवन्नपि जीवनाय
भ्रमन् धरित्र्यामपि यावदम्बुधि।

अधीत्य शास्त्राण्यपि चिन्तयन् मुहुर्
धिया विहीनो न हि याति धन्यताम् ॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

गणक, बर्बर, पदार्थ, अधिगच्छति, प्रश्न, उपनिनाय, कठिनी, जात रभस , ऊह, सवादिनी, सवाद, विसवाद, वृत्त ।

(२) पर्याय-शब्द लिखो—

पुत्र, वाक्, गणक ।

(२)

(१) सधि-विच्छेद करो—

शास्त्रानुसारेण, राजोवाच, पुनरब्रवीत्, निजोहेन, किन्त्वबुद्धि, अन्यच्च, तस्मादवश्य, इत्यभिधाय, निषेवन्नपि, शास्त्राण्यपि ।

(२) समास-विग्रह करो—

देवधर-नामा, अभ्यस्त-शास्त्र , सुवर्णाङ्गुलीयकम्, गणक-कुमार, कृताभ्यास , अबुद्धि , स्वकीयोहेन, जन्मान्ध ।

(३) प्रकृति और प्रत्यय बताओ—

पाठ्यमान , अभ्यस्त, अधीत, गणना, विहस्य, अभिधाय, आज्ञप्तवान्, निषेवन्, चिन्तयन्, धन्यताम् ।

(४) गम् धातु के पूर्व विभिन्न उपसर्ग जोडकर नयी क्रियाएँ बनाओ और उनके अर्थ लिखो ।

(३)

(१) राजा और गणक-कुमार की बातचीत सवाद-रूप में सस्कृत में लिखो ।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो—

पित्रा पाठ्यमान पदार्थं नाधिगच्छति।

इत्यभिज्ञाय राजा किञ्चिद् वस्तु दत्वा तम् आज्ञप्तवान्।

(४)

(१) 'शुकवद् अभ्यस्तशास्त्रो बभूव'—इस वाक्य का क्या तात्पर्य है ?

(२) शास्त्र का जानकार होने पर भी गणक-कुमार से गलती क्यो हुई ?

(३) गणक-कुमार अबुद्धि था इसका पता कैसे चला ?

(४) मूर्ख किसे कहते है ? आपकी सम्मति में मूर्खों की श्रेणी में किस-किस प्रकार के व्यक्ति आवेंगे ? (इस सबध में सस्कृत में मूर्ख-शतक नामक पुस्तक देखो)।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. पुरुष-परीक्षा—हिन्दी अनुवाद सहित (वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई)।

२ पुरुष-परीक्षा—हिन्दी अनुवाद (पुस्तक-मन्दिर, लहरियासराय)।

: ५ :

नाहं बलाका

(कथासरित्सागरात्)

[अहंकारी तापस, पतिव्रता साध्वी और मातृ-पितृ-भक्त ज्ञानी धर्म-व्याध की यह उपदेशपूर्ण कथा भारतीय कथा-साहित्य की बहुत प्रसिद्ध कृति है। महाभारत के वन-पर्व में बड़े विस्तार के साथ इसका वर्णन हुआ है। (अध्याय १६९ से १७८)।

कथासरित्सागर की ५६वी तरंग में भी यह कथा आयी है। संकलित अंश कथासरित्सागर के गद्य रूपान्तर से उद्धृत किया गया है।]

आसीत् पुरा कोऽपि महातपा वन-वासी मुनि। कदाचित् तरुच्छायोपविष्टस्य तस्योपरि बलाकैका विष्ठामुत्ससर्ज। स च क्रुद्धस्तां ददर्श। दृष्टमात्रैव सा बलाका भस्मसादभूत्। ततश्च स मुनि तप-प्रभावादहङ्कारमापद्यत।

एकदासौ मुनि क्वापि नगरे एक ब्राह्मण-गृहमेत्य तद्-गृहिणी भिक्षामयाचत। सा तु गृहिणी पतिव्रता प्रतीक्षस्व क्षण यावद् भर्तु परिचर्यां समापये इति त निजगाद। ततश्च त कोप-दृष्ट्या वीक्षमाण निरीक्ष्य सा विहस्याभ्यभाषत—मुने! नाह बलाकेति। तदाकर्ण्य मुनिरद्भुतम्मन्यमान एतत् कथमिव ज्ञातमनया इति चिन्तयन् तत्र समुपविश्य तस्थौ।

ततश्च सा साध्वी आदावग्नि-कार्यं तत भर्तु शुश्रूषा कृत्वा भिक्षामादाय मुनेरन्तिकमाजगाम। स च मुनि बद्धाञ्जलि-

स्तामवदत्—कथ त्वया अनन्य-गोचरो बलाका-वृत्तान्तो ज्ञात इत्यतो ब्रूहि, ततो भिक्षा ग्रहीष्ये। इत्युक्तवन्त त मुनि सोवाच—मुने ! न भर्तृ-सेवाया अपर कञ्चन धर्म करोम्यहम्। तत्प्रसादेन मे एतादृश विज्ञानम्। किञ्चेत धर्मव्याधाख्य कञ्चन मासविक्रयिण गत्वैतत् पृच्छ। ततस्ते श्रेय भविष्यति। निरहङ्कारश्च भविष्यसि। इति। एव सर्वविदा पतिव्रतयाभिहित गृहीतातिथिसत्कारस्ता प्रणम्य स मुनिस्तस्माद् गृहाद् निरगात्।

अन्येद्यु. स मुनि. समन्विष्य त धर्मव्याध विपणि-स्थ मासानि विक्रीणन्तमुपागच्छत्। धर्मव्याधश्च दृष्ट्वैव त मुनिमभापत—ब्रह्मन् ! कि पतिव्रतया तया इह त्व प्रेषित ? तदाकर्ण्य स मुनिर्विस्मित. त धर्मव्याधमवादीत्—भद्र ! मासविक्रयिणस्ते कथमीदृश विज्ञानम् ?

इत्यभिहितवन्त त मुनि धर्मव्याधो निजगाद—ब्रह्मन् ! अह मातापित्रोर्भक्त। तौ हि मम परायणम्। तयो स्नपितयो स्नामि भोजितयो भुञ्जे शायितयोश्च शये। तेन मे एतादृश विज्ञानम्। अन्य-हताना च मृगादीना मासानि स्व-धर्म इति वृत्त्यर्थ, न तु अर्थलालस्येन, विक्रीणे। हे मुने ! ज्ञान-विघ्नमहङ्कारस्, त मुक्त्वा स्वधर्म चर, येनाशु पर श्रेयोऽवाप्स्यसि।

इत्येवमनुशिष्टस्तेन धर्मव्याधेन स मुनिस्तद्-गृहान् गत्वा तस्य धर्मव्याधस्य सर्वा क्रियामवलोक्य परितुष्टो वनमगात्। अवाप च तदुपदेशात् सिद्धिम्।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

उत्ससर्ज, आपद्यत, अग्नि-कार्यं, निरगात्, उपागच्छत्, परायण, विज्ञान, लालस्य, श्रेयम्, अवाप ।

(२) विरोधी शब्द लिखो—

छाया, अहकार, पति ।

(३) समानार्थ शब्द लिखो—

वन, गृह, अन्तिक, आशु ।

(२)

(१) सन्धि करो—

छाया+उपविष्ट, एकदा+असौ, इति+उक्तवान्, तरु+छाया, वलाका+एका, करोमि+अहम्, गत्वा+एतत्, क्रुद्ध+ताम्, श्रेय+अवाप्स्यसि, परितुष्ट+मनसि ।

(२) समास-विग्रह करो—

महातपा, तरुच्छायोपविष्टस्य, तप प्रभावात्, तद्गृहिणी, बद्धाञ्जलि, निरहङ्कार, अन्यहृताना, माता-पित्रो, तदुपदेशात् ।

(३) निम्नलिखित शब्दो में उपसर्ग, धातु और प्रत्यय को अलग-अलग बताओ—

उपविष्ट, दृष्ट, एत्य, वीक्षमाण, मन्यमान, आदाय, उक्तवन्त, अभिहित, विस्मित, भुक्त, स्नपित, भोजित, विज्ञान, मुक्त्वा, अनुशिष्ट, सिद्धि ।

(४) हेतुकृदन्त (Infinitive) किस प्रकार बनता है? हेतुकृदन्त के

५ उदाहरण लिखो ।

(५) ये रूप कहाँ के हैं —
अयाचत, प्रतीक्षस्व, ग्रहीष्ये, उपागच्छत, भुञ्जे, विक्रीणे ।

(६) स्नात और स्नपित, भुक्त और भोजित, तथा शयित और शायित में अन्तर बताओ ।

(३)

(१) धर्मव्याध ने मुनि से जो बात कही उसे अपने शब्दो में लिखो ।

(२) निम्नलिखित शब्दो का प्रयोग वाक्यो में करो —
एकदा, येन, आकर्ण्य, यावद्, इति ।

(४)

(१) कथा का भीतरी आशय क्या है ?

(२) व्याध माता-पिता की सेवा किस प्रकार करता था ? (इस संबंध में महाभारत, वनपर्व, अध्याय १७७ देखो ।)

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. कथा-सरित्सागर, तरग ५६ ।
२ महाभारत, वनपर्व, अध्याय १६९—१७८ ।
३. पद्मपुराण, सृष्टिखड, अध्याय ५०—५६ ।
४. द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी—भारतीय उपाख्यानमाला ।
५. राजगोपालाचार्य—महाभारत-कथा, प्रकरण ३८ ।

: ६ :

सुभाषितानि (१)

[सुभाषित का अर्थ है सुन्दर उक्ति । सुभाषित उस भावपूर्ण अथवा चुटीली उक्ति को कहते है, जो हृदय मे सटीक जा बैठे । संस्कृत साहित्य में सुभाषितो का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है । कहा गया है—

पृथिव्या त्रीणि रत्नानि जलमन्न सुभाषितम् ।
मूढै पाषाण-खण्डेषु रत्न-सज्ञा विधीयते ।।

सस्कृत सुभाषितो के अनेक सग्रह तैयार किये गये जिनमे कवीन्द्र-वचन-समुच्चय, सदुक्ति-कर्णामृत, सूक्ति-मुक्तावली, शार्ङ्गधर-पद्धति और सुभाषितावली विशेष प्रसिद्ध है । आधुनिक काल के सग्रहो मे सुभाषित-रत्न-भाण्डागार सबसे महत्त्वपूर्ण है । सुभाषित-सग्रहो में यह सबसे बडा है। छोटे सग्रहो मे समयोचित-पद्य-मालिका उल्लेखनीय है । दोनो बम्बई के निर्णयसागर प्रेस मे प्रकाशित हुए है ।]

अपूर्व कोऽपि कोपोऽय विद्यते तव, भारति ।
व्ययतो वृद्धिमायाति क्षयमायाति सचयात् ।।१।।

विद्या ददाति विनय, विनयाद् याति पात्रताम् ।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति, धनाद् धर्मं, तत सुखम् ।।२।।

अजरामर-वत् प्राज्ञो - विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ।।३।।

अन्न-दान पर दान, विद्या-दान तत परम् ।
अन्नेन क्षणिका तृप्तिर् यावज्जीव च विद्यया ।।४।।

क्षणश कणशश्चैव विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ।
क्षण-त्यागात् कुतो विद्या, कण-त्यागात् कुतो धनम् ॥५॥

सुखार्थिन कुतो विद्या, कुतो विद्यार्थिन सुखम् ?
सुखार्थी वा त्यजेद् विद्या, विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम् ॥६॥

महाजनस्य ससर्ग कस्य नोन्नति-कारक. ।
पद्म-पत्र-स्थित वारि धत्ते मुक्ताफल-श्रियम् ॥७॥

तृणानि भूमिरुदक वाक् चतुर्थी च सूनृता ।
एतान्यपि सता गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥८॥

प्रिय-वाक्य-प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ।
तस्मात् तदेव वक्तव्य, वचने का दरिद्रता ? ॥९॥

सुलभा पुरुषा राजन् ! सतत प्रियवादिन ।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥१०॥

सत्य ब्रूयात्, प्रिय ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम् ।
प्रिय च नानृत ब्रूयादेष धर्म. सनातन. ॥११॥

पय पान भुजङ्गाना केवल विष-वर्द्धनम् ।
उपदेश तु मूर्खाणा प्रकोपाय न शान्तये ॥१२॥

शैले शैले न माणिक्य, मौक्तिक न गजे गजे ।
साधवो न हि सर्वत्र, चन्दन न वने वने ॥१३॥

गच्छन् पिपीलको याति योजनाना शतान्यपि ।
अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेक न गच्छति ॥१४॥

परोपदेशे पाण्डित्य सर्वेषा सुकर नृणाम् ।
धर्मे स्वीयमनुष्ठान कस्यचित् तु महात्मन. ॥१५॥

मातृवत् पर-दारेषु पर-द्रव्येषु लोष्ठवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु, य पश्यति स पश्यति ॥१६॥

काव्य-शास्त्र-विनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन च मूर्खाणा निद्रया कलहेन वा ॥१७॥

पुस्तक-स्था तु या विद्या, पर-हस्त-गत धनम् ।
कार्य-काले समुत्पन्ने न सा विद्या न तद् धनम् ॥१८॥

मरु-स्थल्या यथा वृष्टि, क्षुधार्ते भोजन यथा ।
दरिद्रे दीयते दान, सफल पाण्डु-नन्दन ! ॥१९॥

आलस्य हि मनुष्याणा शरीर-स्थो महान् रिपु ।
नास्त्युद्यम-समो वन्धु कृत्वा य नावसीदति ॥२०॥

अलसस्य कुतो विद्या, कुतोऽविद्यस्य वै धनम्? ।
अ-धनस्य कुतो मित्रममित्रस्य कुत. सुखम् ॥२१॥

बहूनामप्यसाराणा सहति कार्य-साधिका ।
तृणैर् गुणत्वमापन्नैर् बध्यन्ते मत्त-दन्तिन ॥२२॥

सेवितव्यो महान् वृक्षो फलच्छाया-समन्वित ।
यदि दैवात् फल नास्ति च्छाया केन निवार्यते ? ॥२३॥

गते शोको न कर्त्तव्यो, भविष्य नैव चिन्तयेत् ।
वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति विचक्षणा ॥२४॥

क्षणे तुष्टा क्षणे रुष्टास् तुष्टा रुष्टा क्षणे-क्षणे ।
अ-व्यवस्थित-चित्ताना प्रसादोऽपि भयङ्कर· ॥२५॥

मनसा चिन्तित कार्य वचसा न प्रकाशयेत् ।
अन्य-लक्षित-कार्यस्य यत सिद्धिर् न जायते ॥२६॥

परोक्षे कार्य-हन्तार, प्रत्यक्षे प्रिय-वादिनम् ।
वर्जयेत् तादृश मित्रं विष-कुम्भ पयो-मुखम् ॥२७॥
को न याति वश लोके मुखे पिण्डेन पूरिते ।
मृदङ्गो मुख-लेपेन करोति मधुर-ध्वनिम् ॥२८॥
गच्छत स्खलन क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।
हसन्ति दुर्जनास् तत्र, समादधति सज्जनाः ॥२९॥

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—
पात्रता, संसर्ग, सूनृता, गुणत्व, आपन्न, स्खलन ।
(२) समानार्थक शब्द लिखो—
भारती, पय , भुजग, भोजन, रिपु, वृक्ष ।
(३) विपरीत शब्द लिखो—
सुलभ, पथ्य, सुकर, महान्, मधुर, उन्नति, वक्ता, प्रकोप, व्यय ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—
विनयाद्याति, कणशश्चैव,नास्त्युद्यम-समो वन्धु , तुष्टा रुष्टा ,सिद्धिर्न ।
(२) समास-विग्रह करो—
अपूर्व , यावज्जीव, पद्म-पत्र-स्थितं, प्रिय-वाक्य-प्रदानेन, अप्रियम्, पय.पानम्, पुस्तकस्था, पाण्डु-नन्दन, उद्यम-सम , अ-धन , मत्तदन्तिन , फलच्छाया-समन्वित , अव्यवस्थित-चित्ताना, अन्यलक्षित-कार्यस्य, विषकुम्भ, पयोमुखम् ।
(३) उपसर्ग, धातु और प्रत्यय वताओ—
समादधति, आयाति, अवसीदति ।

(४) इस पाठ मे जितने वर्तमान-कृदन्त और विधि-कृदन्त हो, उनको चुनो ।

(३)

(१) इन पद्यों का भाव संस्कृत में लिखो—
श्लोक ७, श्लोक २९ ।

(२) विद्या के संबध में पाँच पंक्तियाँ संस्कृत मे लिखो ।

(४)

(१) हिन्दी और अंग्रेजी की कुछ ऐसी लोकोक्तियाँ या पद्य लिखो जिनका भाव इस पाठ के श्लोको से मिलता-जुलता हो ।

(२) इस पाठ के पाँच श्लोको को कंठस्थ करो ।

: ७ :

पण्डित-शत्रुः

(पञ्चतन्त्रात्)

[सस्कृत के कथा-साहित्य के दो विभाग किये जा सकते हैं—(१) उपदेश-प्रधान और (२) मनोरजन-प्रधान। वृहत्कथा, कथा-सरित्सागर, विक्रमचरित, वेताल-पंचविंशति आदि दूसरे विभाग में आते है और पचतत्र, हितोपदेश आदि प्रथम विभाग में। इस विभाग का सवसे महत्त्वपूर्ण ग्रथ पंचतत्र है।

जैसा कि नाम से सूचित होता है, पंचतंत्र में पाँच अध्याय हैं—१ मित्र-भेद, २ मित्र-सप्राप्ति, ३. काकोलूकीय, ४. लव्ध-प्रणाश और ५ अपरीक्षित-कारक। प्रत्येक तन्त्र में एक प्रधान कथा है जिसके अन्तर्गत अनेक उपकथाएँ तथा गौण कथाएँ हैं। कथाओ के साथ उपदेशात्मक श्लोक हैं।

पचतत्र के कर्त्ता का नाम विष्णुशर्मा कहा गया है। कहा जाता है कि किसी राजा के राजकुमार थे जिनको पढ़ना-लिखना सुहाता ही न था। उनको शिक्षित, नीति-कुशल और सदाचार-सपन्न वनाने के लिए विष्णु-शर्मा ने मनोरजक कथाओ का सहारा लिया।

पचतत्र की देश और विदेश में सर्वत्र वड़ी प्रसिद्धि हुई। सस्कृत, प्राकृत तथा देश-भाषाओ में उसके अनेक रूपान्तर और सस्करण प्रस्तुत हुए। पहलवी, अरवी, सीरियक, यूनानी, लैटिन, हिब्रू आदि अनक विदेशी भाषाओ में उसके अनुवाद हुए। ईसप की कहानियो का मूल भी पचतत्र की कथाओ को ही वताया गया है।

पचतत्र वड़ी सरल शैली में लिखा गया है। उसकी भाषा सीधी-सादी और मुहावरेदार है। व्यावहारिक जीवन के दर्शन पर इतना सुन्दर ग्रथ

दूसरा नही ।

सकलित कथा प्रथम तत्र (मित्र-भेद) की २२वी और अन्तिम कथा है ।]

एकस्मिन्नगरे कोऽपि विप्रो, महा-विद्वान् पर पूर्व-जन्म-योगेन चौरो वर्तते । स तस्मिन् पुरेऽन्य-देशादागताश् चतुरो विप्रान् वहूनि वस्तूनि विक्रीणतो दृष्ट्वा चिन्तितवान्—अहो ! केनोपायेनैषा धन लभे ? इति विचिन्त्य तेषा पुरोऽनेकानि शास्त्रोक्तानि सुभाषितानि चातिप्रियाणि मधुराणि वचनानि च जल्पता तेषा मनसि विश्वासमुत्पाद्य सेवा कर्तुमारब्धा । अथवा साध्विदमुच्यते—

असती भवति स-लज्जा, क्षार नीर च शीतल भवति ।
दम्भी भवति विवेकी, प्रिय-वक्ता भवति धूर्त्त-जन ॥१॥

अथ तस्मिन् सेवा कुर्वति तैर्विप्रै सर्व-वस्तूनि विक्रीय बहु-मूल्यानि रत्नानि क्रीतानि । ततस् तानि जङ्घा-मध्ये तत्समक्ष प्रक्षिप्य स्वदेश प्रति गन्तुमुद्यमो विहितः । तत स धूर्त्त-विप्रस् तान् विप्रान् गन्तुमुद्यतान् प्रेक्ष्य चिन्ता-व्याकुलित-मना सजात । अहो ! धनमेतन् न किञ्चिन् मम चटित, अथैभि सह यामि, पथि क्वापि विष दत्त्वैतान् निहत्य सर्वरत्नानि गृह्णामि । इति विचिन्त्य तेषामग्रे स-करुण विलप्येदमाह—भो मित्राणि ! यूय मामेकाकिन मुक्त्वा गन्तुमुद्यता । मम मनो भवद्भि सह स्नेह-पाशेन बद्ध भवद्विरह-नाम्नैवाकुल तथा सजात यथा धृति क्वापि न धत्ते । यूयमनुग्रह विधाय सहाय-भूत मामपि सहैव नयत ।

तद्वच श्रुत्वा ते करुणार्द्र-चित्तास् तेन सममेव स्वदेश प्रति प्रस्थिताः । अथाध्वनि तेषा पञ्चानामपि पल्लीपुर-मध्ये व्रजता ध्वाङ्क्षा कथयितुमारब्धा —रे रे किराता ! धावत धावत ।

सपाद-लक्ष-धनिनो यान्ति। एतान्निहत्य धन नयत।

ततः किरातैर्ध्वाङ्क्षवचनमाकर्ण्य सत्वर गत्वा ते विप्रा लगुडप्रहारैर् जर्जरीकृत्य वस्त्राणि मोचयित्वा विलोकिताः पर धनं किञ्चिन् न लब्धम्। तदा तैः किरातैरभिहितम्—भोः पान्थाः! पुरा कदापि ध्वाङ्क्ष-वचनमनृत नासीत्। तद् भवता सनिधौ क्वापि धन विद्यते तदर्पयत। अन्यथा सर्वेषामपि वध विधाय चर्म विदार्य प्रत्यङ्ग प्रेक्ष्य धनं नेष्यामः। इति।

तदा तेषामीदृश-वचनमाकर्ण्य चौर-विप्रेण मनसि चिन्तितम्—यदैषा विप्राणा वध विधायाङ्गं विलोक्य रत्नानि नेष्यन्ति तदापि मा वधिष्यन्ति। ततोऽह पूर्वमेवात्मानमरत्न समर्प्यैतान् मुञ्चामि। उक्त च—

मृत्योर्विभेषि किं बाल! न स भीत विमुञ्चति।
अद्य वाब्द-शतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिना ध्रुवः॥२॥

तथा च—

गवार्थे ब्राह्मणार्थे च प्राण-त्याग करोति यः।
सूर्यस्य मण्डल भित्त्वा स याति परमा गतिम्॥२॥

इति निश्चित्य तेनाऽभिहितम्—भोः किराता! यद्येव ततो मा पूर्व निहत्य विलोकयत।

ततस् तैस् तथाऽनुष्ठिते त धन-रहितमवलोक्यापरे चत्वारोऽपि मुक्ताः। अतोऽह ब्रवीमि—

पण्डितोऽपि वर शत्रुर्, न मूर्खो हितकारकः॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

चतुर, विहित, चटित, सहायभूत, व्वाङ्क्षा, अरत्न, बिभेमि, शब्द।

(२) समानार्थक तथा विपरीतार्थक शब्द बताओ—

विद्वान्, बहूनि, अनृत, मुक्ता, शत्रु ।

(२)

(१) ये रूप कहाँ के हैं ? इनका पद-परिचय (Parsing) लिखो—

चतुर, विक्रीणत, जल्पता, अनुष्ठिते, ब्रवीमि ।

(२) संधि करो—

नाम्ना+एव, किञ्चित्+न, चत्वार+अपि, आगतान्+चतुर, स+तस्मिन् ।

(३) समास करो—

महती सेवा, महता सेवा, सर्वाणि रत्नानि, चिन्तया व्याकुलित मनः येषा ते ।

(४) कृ धातु से निम्न-लिखित कृदन्त बनाओ—

वर्तमानकृदन्त (स्त्रीलिंग), भूतकृदन्त (पुलिंग), विधिकृदन्त, हेतुकृदन्त, पूर्वकालिक कृदन्त ।

(३)

(१) किरातो ने ब्राह्मणो से क्या कहा ? चौर-ब्राह्मण ने क्या उत्तर दिया ? संस्कृत में लिखो।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो—

तदा तेषामीदृशवचनमाकर्ण्य ··· मुञ्चामि ।

(४)

(१) इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

(२) चौर-ब्राह्मण ने शेष ब्राह्मणो की प्राण-रक्षा कैसे और क्यो की ?

(३) विद्वान् शत्रु भी अच्छा, पर मूर्ख मित्र भी अच्छा नही—इस कहावत के उत्तरार्द्ध को चरितार्थ करने वाली कोई कथा लिखो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. पंचतत्र—सस्कृत।

२. पचतंत्र—हिन्दी अनुवाद, मोतीचन्द्र कृत (राजकमल, दिल्ली)

३. ंचतंत्र—हिन्दी अनुवाद, सन्तराम कृत (राजपाल एण्ड सस, दिल्ली)

४. Pancha Tantra, Englisn Translation (Jaico Books)

: ८ :

बहु-मान-कथानकम्

(बृहत्-कथा-कोषात्)

[संस्कृत के कथा-साहित्य की जितनी समृद्धि जैन विद्वानो द्वारा हुई, उतनी दूसरो द्वारा नही। जैनो द्वारा रचित संस्कृत कथा-साहित्य बहुत विशाल है। इन कथाओ के कुछ सग्रह कथा-कोप नाम से सकलित किये गये। इनमें हरिषेण कृत बृहत्कथाकोष सबसे प्राचीन और सबसे बडा है। उसमें लगभग साढे बारह हजार श्लोक और १५७ कथाएँ हैं। उसकी रचना विक्रम-सवत् ९८९ मे हुई। भाषा बहुत सरल और बोलचाल की सी है।

सकलित कथा ग्रथ की २१वी कथा है। कथा में यह बताया गया है कि प्राणियो का आदर-मान और सार-सम्हाल करने से ही उनसे हम अपना कार्य सुचारु-रूप से करवा सकते हैं, हम दूसरो का ध्यान रखेंगे तो दूसरे हमारा ध्यान रखेंगे, दूसरो की बेकद्री करके हम वास्तव में अपनी ही बेकद्री करते हैं।]

(१)

वाराणसी-समीपे च गङ्गा-रोधसि सुन्दर ।
पलाशोपपद कूटो ग्रामो बहु-धनोऽभवत् ॥१॥
आसीदशोक-नामात्र ग्रामे बहु-धनो धनी ।
महत्तरोऽस्य भार्या च नन्दा तन्मानस-प्रिया ॥२॥
ततोऽन्या सचिवोद्भूता सुनन्दा नाम कन्यका ।
परिणीता साशोकेन नन्दा वन्ध्येति सुन्दरी ॥३॥
अशोक शोक-सत्यक्तो ऽनेक-गोकुल-नायक ।
सतिष्ठते ऽग्रणीस् तत्र नन्दिताशेष-बान्धव ॥४॥

वृषभध्वज-भूपाय घृत-कुम्भ-सहस्रकम् ।
वर्षे वर्षे प्रदायास्ते भुञ्जानो गो-कुलानि सः ॥५॥

दृष्ट्वाशोको महा-रार्टि तथा नन्दा-सुनन्दयोः ।
अर्धार्धं गो-कुल कृत्वा ददौ कार्य-विचक्षण. ॥६॥

(२)

तदा गोपाल-भाण्डानां गवा च परिपालनै ।
चकार सा सुनन्दा च बहु-मानं दिने दिने ॥७॥

ग्रामाद् गवा प्रयान्तीनामटवी स्तोकमन्तरम् ।
प्रयाति च सम ताभि· सुनन्दा स्नेह-तत्परा ॥८॥

भूयोऽप्येकैकशो गाः स्वा गणयित्वा पुनःपुनः ।
गो-पालक-समूहाना समर्प्ययाति मन्दिरम् ॥९॥

वनाद् गृह विशन्तीना गवामायाति समुखम् ।
भूयोऽपि गणयित्वा ता. प्रवेशयति मन्दिरम् ॥१०॥

आगताना गृह तासा बहु वट्टलक वरम् ।
ददाति सा पुनस्तस्यै दुग्ध ददति ता बहु ॥११॥

तथा गोपालकेभ्योऽपि दुग्धं दधि घृत बहु ।
ददाति भोजन स्थान चर्वणादिकमेव सा ॥१२॥

तेऽपि गो-पालका· दृष्ट्वा यत्र निर्झर-नीरकम् ।
कोमलानि च शष्पाणि सन्ति तत्र नयन्ति गाः ॥१३॥

सुगन्धि शीतलं तोय पाययित्वा पुन पुन ।
मृदु स्निग्धानि मृष्टानि चारयित्वा तृणान्यपि ॥१४॥

तरुच्छायासु मध्याह्ने कञ्चित्काल निवेश्य ताः ।
गो-कीटान्वेषणेनात्र स्व-हिताः कुर्वतेऽन्वहम् ॥१५॥

एव गो-पालका प्रीतास् तकया वहु-मानिता ।
वन सुखेन गा नीत्वा चानयन्ति पुनर्गृहम् ॥१६॥

भाण्डकेषु पुनर्येषु दुग्धं दधि घृत तथा ।
क्रियते तेपु सस्कार करोति सतत सका ॥१७॥

(३)

नन्दा सु-यौवनोन्मत्ता सु-वल्लभ-तया प्रभो ।
गो-गोप-भाण्डकाना च समान न करोति सा ॥१८॥

गवा वट्टलक नैषा गोपालाना च भोजनम् ।
भाण्डकाना न सस्कार करोति मद-विह्वला ॥१९॥

गावो ददति नो दुग्ध विना समाननेन ता ।
किंचिद् ददति चेदल्पं दुग्ध्वा गोपा पिबन्ति तत् ॥२०॥

यत्-किञ्चिदल्पक दुग्धं स्थाप्यते भाण्डकेषु तत् ।
अशुद्धेषु च सर्वेषु विनाशमुपगच्छति ॥२१॥

नास्ति नन्दा-गृहे दुग्ध न वा दधि घृत न च ।
वहु-मान विना लोके न स्नेहो जायते नृणाम् ॥२२॥

(४)

अत्रान्तरे समाहूय नन्दाख्या पूर्व-वल्लभाम् ।
अशोक प्राह ता कान्ता सस्नेह पुरत स्थिताम् ॥२३॥

घृत-कुम्भ-सहस्र च वृषभध्वज-भूभुजे ।
दातव्यमधुनाऽस्माभिर् निर्विकल्प मनस्विनि ॥२४॥

शतानि घृत-कुम्भाना पञ्च त्व देहि मे प्रिये ।
एतावन्त्येव चान्यानि सुनन्दा दास्यति ध्रुवम् ॥२५॥

(५)

अशोक-वचन श्रुत्वा नन्दा वदति तं क्रुधा ।
तावत्पञ्चशतान्यासन् घृतस्यैक पल न हि ॥२६॥
नन्दा-वचनमाकर्ण्य सुनन्दा जन-वाक्यतः ।
घृत-कुम्भ-सहस्र वै ददावस्मै धवाय सा ॥२७॥
घृत-कुम्भ-सहस्र च दृष्ट्वा स स्व-पुर -स्थितम् ।
अशोको गो-कुल तस्याः सुनन्दाया समर्पयत् ॥२८॥
गृह च स्व-धन चैव स सर्वं जीवितं तथा ।
अशोकोऽपि सनन्दाया ददौ तत्-प्रीत-मानस. ॥२९॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

महत्तर, मानस, गो-कुल, भाण्ड, अटवी, समर्प्य, वट्टलक, चर्वण, शष्प, सस्कार, क्रुध्, पल, धव ।

(२) पर्याय-शब्द लिखो—

गो, अटवी, समान, कान्ता ।

(३) प्रेम के वाचक अधिक से अधिक शब्द लिखो । उनमें कोई अन्तर हो तो उसे समझाओ ।

(२)

(१) प्रेरणायक वर्तमान अन्यपुरुष रूप लिखो—

पा (पीना), चर् (चरना) ।

(२) पूर्वकालिक कृदन्त कैसे बनाया जाता है ? इस पाठ में जो पूर्वकालिक कृदन्त आये हैं, उनको चुनो।

(३) विशेषणों से भाववाचक सज्ञाएँ बनाओ—
शीतल, मधुर, सुन्दर।

(४) प्रत्येक युग्म के अन्तर को स्पष्ट करो—
ददाति और ददति, आयाति और प्रयाति, सन्ति और भवन्ति।

(३)

(१) इस कथा को सस्कृत में अपने शब्दो में लिखो।

(२) वाच्य-परिवर्तन करो—
श्लोक ३, श्लोक २०।

(३) इस पाठ में जितने कर्मवाच्य (वर्तमान काल) के रूप आये हैं, उनको चुनो और उनका प्रयोग वाक्यो में करो।

(४)

(१) नन्दा और सुनन्दा के चरित्र में क्या अन्तर था ? नन्दा क्यो असफल हुई और सुनन्दा क्यो सफल ?

(२) इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

(३) गो-सेवा से क्या लाभ होता है ? गो-सेवा किस प्रकार करनी चाहिए ?

(४) क्या आप अपनी गौ की वैसी ही सभाल रखते है जैसी सुनन्दा रखती थी ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. हरिषेण—बृहत्कथाकोष (सिंघी जैन ग्रथमाला)।
२. वही—हिन्दी अनुवाद (भारतीय दिगबर जैन सघ, मथुरा)।

: ९ :

कपट-मित्रम्

(हितोपदेशात्)

[हितोपदेश पचतत्र के समान उपदेश-प्रधान कथाओ का ग्रथ है। इसकी रचना नारायण पडित्त ने राजा धवलचन्द्र के आश्रय में की। इसका समय चौदहवी शताव्दी के आस-पास का है।

हितोपदेश की रचना पचतत्र के आवार पर हुई है। इसमें चार परिच्छेद हैं—१ मित्रलाभ, २ सुहृद्भेद, ३ विग्रह, ३ सधि। मित्रलाभ पचतत्र के मित्रप्राप्ति तत्र से तथा सुहृद्भेद पचतत्र के मित्रभेद तत्र से मिलता है। वाकी दोनो परिच्छेद नये हैं। पचतत्र के ही समान इसमें कथाएँ गद्य में है जिनके वीच-वीच मे नीति के श्लोक दिये गये है।

हितोपदेश वहुत लोकप्रिय हुआ। सस्कृत के विद्यार्थियो को आरम्भ मे प्राय हितोपदेश ही पढाया जाता रहा है। इसकी लेखनशैली सुवोध होने के साथ-साथ मनोरजक भी है।

सकलित अश हितोपदेश के प्रथम परिच्छेद मित्रलाभ से लिया गया है।]

अस्ति मगध-देशे चम्पकवती नाम अरण्यानी। तस्या चिरान् महता स्नेहेन मृग-काकौ निवसत । स च मृग· स्वेच्छया भ्राम्यन् हृष्ट-पुष्टाङ्ग केनचित् शृगालेनावलोकित.। त दृष्ट्वा शृगालोऽचिन्तयद्—आ· ! कथमेतन्मास सु-ललित भक्षयामि ? भवतु, विश्वास तावदुत्पादयामि।

इत्यालोच्योपसृत्याब्रवीत्—मित्र ! कुशल ते ? मृगेणोक्तम्—कस् त्वम् ? स ब्रूते—क्षुद्रबुद्धि-नामा जम्बुकोऽहम्।

अत्रारण्ये वन्धु-हीनो मृतवन्निवसामि । इदानी त्वा मित्रमासाद्य पुन. स-वन्धुजीवलोक प्रविष्टोऽस्मि । अधुना तवानुचरेण मया सर्वथा भवितव्यम् । मृगेणोक्तम्—एवमस्तु ।

तत पश्चादस्तगते सवितरि भगवति मरीचि-मालिनि तौ मृगस्य वास-भूमि गतौ । तत्र चम्पक-वृक्ष-शाखाया सुबुद्धि-नामा काको मृगस्य चिर-मित्र निवसति । तौ दृष्ट्वा काकोऽवदत्—सखे चित्राङ्ग ! कोऽय द्वितीय. । मृगो ब्रूते—जम्बुकोऽयम् । अस्मत्सख्य-मिच्छन्नागतः । काको ब्रूते—मित्र ! अकस्मादागन्तुना सह मैत्री न युक्ता । तथा चोक्तम्—

अज्ञात-कुल-शीलस्य वासो देयो न कस्यचित् ।
मार्जारस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गव ॥१॥

इत्याकर्ण्य स जम्बुक सकोपमाह—मृगस्य प्रथम-दर्शन-दिने भवानप्यज्ञात-कुल-शील एव । तत् कथ भवता सहैतस्य स्नेहानु-वृत्तिरुत्तरोत्तर वर्धते ?

अय निज परो वेति गणना लघु-चेतसाम् ।
उदार-चरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥२॥

यथाय मृगो मम वन्धुस् तथा भवानपि। मृगोऽब्रवीत्—किम-नेनोत्तरोत्तरेण ? सर्वैरेकत्र विश्रम्भालापै सुखिभि स्थीयताम् । यत —

न कश्चित् कस्यचिन्मित्र न कश्चित् कस्यचिद्रिपु ।
व्यवहारेण मित्राणि जायन्ते रिपवस्तथा ॥३॥

काकेनोक्तम्—एवमस्तु । अथ प्रात सर्वे यथाभिमतदेश गता. ।

एकदा निभृत शृगालो ब्रूते—सखे ! अस्मिन् वनैकदेशे सस्य-पूर्णं क्षेत्रमस्ति । तदह त्वा नीत्वा दर्शयामि । तथा कृते सति स मृग प्रत्यह तत्र गत्वा सस्यं खादति । अथ क्षेत्र-पतिना तद् दृष्ट्वा पाशो नियोजित । अनन्तरं पुनरागतो मृग पाशैर्बद्धोऽचिन्तयत्—को मामित· काल-पाशादिव व्याध-पाशात् त्रातु मित्रादन्यः समर्थः। तत्रान्तरे जम्बुकस् तत्रागत्योपस्थितोऽचिन्तयत्—फलिता तावद-स्माक कपट-प्रबन्धेन मनोरथ-सिद्धि । एतस्योत्कृत्यमानस्य मासासृग्-लिप्तान्यस्थीनि मयावश्य प्राप्तव्यानि । तानि बाहुल्येन भोजनानि भविष्यन्ति । मृगस् त दृष्ट्वोल्लसितो ब्रूते—सखे ! छिन्धि तावन्मम बन्धनम् । सत्वर त्रायस्व माम् । यतः—

आपत्सु मित्र जानीयाद् युद्धे शूरमृणे शुचिम् ।
भार्या क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान् ॥४॥

अपर च—

उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्र-विप्लवे ।
राज-द्वारे श्मशाने च यस् तिष्ठति स बान्धव. ॥५॥

जम्बुको मुहुर्मुहुः पाश विलोक्याचिन्तयत्—दृढस्तावदय बन्ध· । ब्रूते च—सखे ! स्नायु-निर्मिता एते पाशा. । तदद्य भट्टारक-वारे कथमेतान् दन्तैः स्पृशामि । मित्र ! यदि चित्ते नान्यथा मन्यसे तदा प्रभाते यत् त्वया वक्तव्य तत् कर्तव्यम् । इत्युक्त्वा तत्समीप आत्मानमाच्छाद्य स्थितः । अनन्तर स काक. प्रदोष-काले मृगमना-गतमवलोक्येतस्ततोऽन्विष्य तथाविधं दृष्ट्वोवाच—सखे ! किमे-तत् ? मृगेणोक्तम्—अवधीरित-सुहृद्वाक्यस्य फलमेतत् । तथा चोक्तम्—

सुहृदा हित-कामाना य शृणोति न भापितम् ।
विपत् सनिहिता तस्य, स नर शत्रु-नन्दन ॥६॥

काको ब्रूते—स वञ्चक क्वास्ते ? मृगेणोक्तम्—मन्मासार्थी तिष्ठत्यत्रैव ।

तत काको दीर्घं नि श्वस्य प्राह—अरे वञ्चक ! कि त्वया पापकर्मणा कृतम् ? यत —

उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ, य समाचरति पापम् ।
त जनमसत्य-सन्ध, भगवति वसुधे ! कथ वहसि ॥७॥

दुर्जनेन सम सख्य प्रीति चापि न कारयेत् ।
उष्णो दहति चाङ्गार शीत कृष्णायते करम् ॥८॥

दुर्जन. प्रिय-वादी च नैतद् विश्वास-कारणम् ।
मधु तिष्ठति जिह्वाग्रे हृदि हालाहल विषम् ॥९॥

अथ प्रभाते क्षेत्रपतिर् लगुड-हस्तस् त प्रदेशमागच्छन् काकेनावलोकित । तमालोक्य काकेनोक्तम्—सखे मृग ! त्वमात्मान मृतवत् सदर्श्य वातेनोदर पूरयित्वा पादान् स्तब्धीकृत्य तिष्ठ । यदाह शब्द करोमि तदा त्वमुत्थाय पलायिष्यसे । मृगस् तथैव काक-वचनेन स्थित । तत क्षेत्र-पतिना हर्षोत्फुल्ल-लोचनेन तथाविधो मृग आलोकित । आ ! स्वय मृतोऽसि—इत्युक्त्वा मृग बन्धनान्मोचयित्वा पाशान् ग्रहीतु स-यत्नो बभूव। तत काक-शब्द श्रुत्वा मृग सत्वरमुत्थाय पलायित । तमुद्दिश्य तेन क्षेत्र-पतिना क्षिप्तेन लगुडेन शृगालो हत । तथा चोक्तम्—

त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस् त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः।
अत्युत्कटैः पापपुण्यैरिहैव फलमश्नुते ॥१०॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

अरण्यानी, जीवलोक, सवितरि, विश्रम्भालाप, शत्रु-नन्दन, कृष्णायते।

(२) विपरीतार्थक शब्द बताओ—

वर्धते, निज, विपद्, नन्दन, उपकारिन्, उष्ण, वद्ध ।

(३) 'पाना' अर्थ वाली जितनी धातुएँ जानते हो उन सबको लिखो। (धातुएँ उपसर्ग-रहित और उपसर्ग-सहित दोनो प्रकार की हो सकती हैं।)

(२)

(१) संधि करो—

मृगेण+उक्तम्, कश्चित्+शृगाल, इच्छन्+आयात, मृग+ब्रूते, मृग+चरति, मृग+आयाति, मृग+करोति, त्रिभि+वर्षै ।

(२) समास-विग्रह करो—

मृग-काकौ, स्वेच्छया, एतन्मास, पाप-पुण्यै, स्नायु-निर्मिता, अनागतम्, पाप-कर्मणा, असत्य-सन्धम्, स-यत्न ।

(३) उपसर्ग, धातु और प्रत्यय का अलग-अलग निर्देश करो—

आलोच्य, उपसृत्य, उत्कृत्यमान, उपस्थित, अवधीरित, सनिहिता, उत्थाय।

(४) विधि-कृदन्त बनाओ—

कृ, भू, दा, प्राप्, वच्, गम्।

(५) ५१ से ६० तक की गिनती लिखो।

(६) निम्नलिखित रूपों के लिंग, वचन, और विभक्तियों का निर्देश करो—

सवितरि, भगवति, आगच्छन्, अस्थीनि ।

(७) निम्नलिखित रूप कहां के हैं ? उनमें कौन सी धातुएं हैं—

स्थीयताम्, जायन्ते, त्रायस्व, छिन्द्धि, कृष्णायते, अश्नुते ।

(३)

(१) वाच्य-परिवर्तन करो—

सर्वैरेकत्र विश्रम्भालापैः सुखिभिः स्थीयताम् ।

मृगेणोक्तम्—मन्मासार्थी तिष्ठत्यत्रैव ।

(२) मृग शृगाल को पहले-पहल अपने वासस्थान पर ले गया तब मृग और काक तथा शृगाल में जो बातचीत हुई, उसे संवाद-रूप में अपने शब्दो में लिखो ।

(४)

(१) इस कथा से क्या-क्या शिक्षाएँ मिलती हैं ?

(२) सच्चे मित्र के क्या लक्षण हैं ? सच्चा मित्र जीवन के लिए क्यों आवश्यक हैं ?

(३) सच्ची मित्रता और कपट-मित्रता की और कोई कथाएँ जानते हो तो बताओ ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. हितोपदेश—संस्कृत ।

२ हितोपदेश—हिन्दी अनुवाद (राजपाल एण्ड संस, दिल्ली) ।

३ बाल-हितोपदेश—(इंडियन प्रेस, इलाहाबाद) ।

: १० :

ऊर्जस्वलमुद्बोधनम्

(महाभारतात्)

[हिन्दू धर्म के ग्रथो मे चार वेद, चार उपवेद, छै वेदाग, छै दर्शन, दो इतिहास, १८ पुराण, और धर्मशास्त्र तथा तन्त्र-सहिताएँ है । दो इतिहासो में एक रामायण और दूसरा महाभारत है ।

महाभारत सस्कृत-साहित्य का सबसे बडा ग्रथ है । उसमें लगभग एक लाख श्लोक तथा १८ पर्व या खड है । उसमे प्रधान कथा कौरवो और पाण्डवो की है पर बीच-बीच में प्रसगानुसार सैकडो गौण कथाएँ और अन्यान्य प्रसग आये हैं जिनमें नलोपाख्यान, सावित्र्युपाख्यान, भगवद्गीता जैसे बडे-बडे प्रसग भी है ।

महाभारत वास्तव में हिन्दू धर्म का विश्वकोप है । हिन्दू धर्म और सस्कृति से सबध रखने वाला शायद ही कोई ऐसा विषय हो जिसका उल्लेख उसमें न हुआ हो । उसके सबध में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध ह—

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ।

अर्थात् जो इसमें है, वही दूसरे ग्रथो में है और जो इसमें नही है, वह कही नही है ।

पुराणो की भाँति महाभारत के रचयिता भी व्यास प्रसिद्ध है । विद्वानों का मत है कि मूल महाभारत की (जिसका नाम सभवत 'जय' काव्य था) रचना व्यास के द्वारा हुई पर उनके शिष्य वैशपायन और सौति ने उसमें परिवर्धन किया । वैसे महाभारत में समय-समय पर बराबर परिवर्धन होता रहा है ।

सकलित अश महाभारत के पाँचवे पर्व उद्योगपर्व से उद्धृत किया गया है । सौवीर के राजा सजय को सिन्धुराज से पराजित होना पडा

जिस पर वह हताश होकर बैठ गया। इस पर उसकी मनस्विनी माता विदुला ने उसे फटकारते हुए उत्तेजनापूर्ण शब्दो में उद्बोधित किया जिसके फलस्वरूप सजय ने साहस किया और सिन्धुराज पर विजय पाने में सफल हुआ। विदुला का यह उद्बोधन प्रत्येक नवयुवक के पढ़ने योग्य है।]

(१)

विदुला नाम राजन्या जगर्हे पुत्रमौरसम्।
निर्जित सिन्धु-राजेन शयान दीन-चेतसम् ॥१॥

(२)

उत्तिष्ठ हे कापुरुष ! मा शेष्वैव पराजित.।
अमित्रान् नन्दयन् सर्वान् मित्राणा चापि शोकद ॥२॥
अलात तिन्दुकस्येव मुहूर्त्तमपि हि ज्वल।
मा तुषाग्निरिवानर्चिर् धूमायस्व जिजीविषु ॥३॥
मुहूर्त्तं ज्वलित श्रेयो न च धूमायित चिरम् ॥४॥
उद्भावयस्व वीर्यं वा ता वा गच्छ ध्रुवा गतिम्।
धर्मं पुत्राग्रत कृत्वा किं निमित्त हि जीवसि ? ॥५॥
श्रुतेन तपसा वापि श्रिया वा विक्रमेण वा।
जनान् योऽभिभवत्यन्यान् कर्मणा हि स वै पुमान् ॥६॥
निरमर्षं निरुत्साह निर्वीर्यमरि-नन्दनम्।
मा स्म सीमन्तिनी काचिज् जनयेत् पुत्रमीदृशम् ॥७॥
मा धूमाय ज्वलात्यन्तमाक्रम्य जहि शात्रवान्।
ज्वल मूर्धन्यमित्राणा मुहूर्त्तमपि वा क्षणम् ॥८॥

एतावानेव पुरुषो यदमर्षी यदक्षमी ।
क्षमावान् निरमर्षश्च नैव स्त्री न पुनः पुमान् ॥९॥

(३)

भृत्यैर्विहीयमानानां पर-पिण्डोपजीविनाम् ।
कृपणानामसत्त्वाना मा वृत्तिमनुवर्तिथाः ॥१०॥
अनु त्वा तात ! जीवन्तु ब्राह्मणाः सुहृदस्तथा ।
पर्जन्यमिव भूतानि देवा इव शत-क्रतुम् ॥११॥
यमाजीवन्ति पुरुष सर्व-भूतानि सजय ।
पक्व द्रुममिवासाद्य तस्य जीवितमर्थवत् ॥१२॥
यस्य शूरस्य विक्रान्तैरेधन्ते वान्धवाः सुखम् ।
त्रिदशा इव शक्रस्य साधु तस्येह जीवनम् ॥१३॥
स्व-वाहु-बलमाश्रित्य योऽभ्युज्जीवति मानवः ।
स लोके लभते कीर्त्ति परत्र च शुभा गतिम् ॥१४॥

(४)

सन्ति वै सिन्धु-राजस्य सतुष्टा न तथा जनाः ।
अनुदुष्येयुरपरे पश्यन्तस्तव पौरुषम् ॥१५॥
तं. कृत्वा सह सघात गिरि-दुर्गालय चर ।
काले व्यसनमाकाङ्क्षन् नैवायमजरामरः ॥१६॥
सजयो नामतश्च त्व न च पश्यामि तत् त्वयि ।
अन्वर्थ-नामा भव मे पुत्र ! मा व्यर्थ-नामकः ॥१७॥

(५)

नात पापीयसी काञ्चिदवस्था शम्बरोऽब्रवीत् ।
यत्र नैवाद्य न प्रातर् भोजन प्रतिदृश्यते ॥१८॥
दारिद्र्यमिति यत् प्रोक्त पर्याय-मरण हि तत् ॥१९॥
यदि त्वामनुपश्यामि परस्य प्रिय-वादिनम् ।
पृष्ठतोऽनुव्रजन्त वा का शान्तिर् हृदयस्य मे ॥२०॥
नाऽस्मिन् जातु कुले जातो गच्छेद् योऽन्यस्य पृष्ठत ।
न त्व परस्यानुचरस् तात ! जीवितुमर्हसि ॥२१॥
उद्यच्छेदेव न नमेदुद्यमो ह्येव पौरुषम् ।
अप्यपर्वणि भज्येत न नमेदिह कस्यचित् ॥२२॥
अकुर्वन्तो हि कर्माणि कुर्वन्तो निन्दितानि च ।
सुख नैवेह नामुत्र लभन्ते पुरुषाधमा ॥२३॥
उत्थातव्य जागृतव्य योक्तव्य भूति-कर्मसु ।
भविष्यतीत्येव मन कृत्वा सततमव्यथै ॥२४॥

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दों के अर्थ लिखो—**

राजन्या, अलात, अनर्चि, जिजीविषु, सीमन्तिनी, पुमान्, शतक्रतु, परत्र, पर्याय-मरण, अमुत्र, उद्यच्छेद् ।

(२) शत्रु और आकाश के अधिक से अधिक पर्याय शब्द लिखो ।

(२)

(१) **सधि-विच्छेद करो—**

शेष्वैव, निरमर्ष, काचिज्जनयेत्, गच्छेद्योन्यस्य, उद्यच्छेदेव ।

(२) समास-विग्रह करो—
कापुरुष, शौचद, अमित्रान्, अनर्चि, निरुत्साह, असत्त्वानाम्, स्व-बाहुबलम्, अन्वर्थनामा, पुरुषाधमा ।
(३) प्रकृति और प्रत्यय अलग-अलग करके बताओ—
शयान, पराजित, नन्दयन्, नन्दनम्, विहीयमान, जीवनम्, पश्यन्त, दारिद्र्यम्, अनुव्रजन्तम्, उत्थातव्य, योक्तव्य, भूति ।
(४) कर्मवाच्य का भूत-कृदन्त किस प्रकार बनाया जाता है ? भूत-कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो ।

(३)

(१) विदुला के उपदेश को संस्कृत में संक्षेप में लिखो ।

(४)

(१) मुहूर्त्तं ज्वलितं श्रेयो न च धूमायितं चिरम्—इस कथन के भाव को विस्तृत करके लिखो ।
(२) दारिद्र्य की निन्दा के जो पद्य (हिन्दी, संस्कृत या अन्य भाषाओं के) याद हों, उनको लिखो ।
(३) अप्यपर्वणि भज्येत न नमेदिह कस्य चित् ।
क्षमावान् निरमर्षश्च नैव स्त्री न पुनः पुमान् ।
इन कथनों से आप कहाँ तक सहमत हैं ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ महाभारत—संस्कृत, उद्योगपर्व ।
२ महाभारत—हिन्दी अनुवाद (इंडियन प्रेस अथवा रामनारायण लाल)
३ भारतीय उपाख्यानमाला—(रामनारायणलाल, इलाहाबाद)
४. संक्षिप्त हिन्दी महाभारत—महावीरप्रसाद द्विवेदी (इंडियन प्रेस)
५ विदुलोपाख्यान—हिन्दी टीका सहित (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, बनारस) ।

११ :

परशुरामस्य कोपः

(प्रसन्नराघवात्)

[प्रसन्नराघव सस्कृत का वहुत प्रसिद्ध नाटक है जिसमें सात अकों में रामायण की कथा को नाटक का रूप दिया गया है। इसके लेखक का नाम जयदेव है जो गीतगोविन्द-कर्त्ता जयदेव से भिन्न है। उसका समय निश्चित रूप से ज्ञात नही पर वह चौदहवी शताब्दी से पूर्व का है। प्रसन्नराघव की शैली प्रसाद-गुण-मयी है। हिन्दी के तुलसीदास और केशवदास जैसे कवियो को इस नाटक ने वहुत प्रभावित किया। दोनो ने उसके अनेक प्रसगो और भावो को अपनी रचनाओ में अपनाया है।

सकलित अश नाटक के चतुर्थ अक से लिया गया है। महादेव के धनुष का तोडा जाना सुनकर परशुराम क्रुद्ध हो उठते है। उसी का चित्रण इस दृश्य में है।]

(तत प्रविशति जामदग्न्य)

जामदग्न्य —(साटोप परिक्रम्य) अहो धृष्टता जनकस्य ! यदय हर-चापारोपणेन कन्या-दान प्रतिजानीते। (परशु विलोक्य) अलम् अस्मिन्नुपेक्षया। मनोरथोपनीत-जामातृ-भुज-वलावलेप-दुर्ललित खल्वयम्। (विलोक्य) कथमय शतानन्द-शिष्यस् ताण्ड्यायन ?

(तत प्रविशति ताण्ड्यायन)

ताण्ड्यायन —भगवन् ! अभिवादये।

जामदग्न्य —आयुष्मान् भूया। कथय तावत्। अपि नाम भवदुपाध्याय-यजमानस्य निवृत्ता हर-चापारोपण-श्रद्धा ?

ताण्ड्यायनः—निवृत्ता ।

जामदग्न्यः—(सहर्षम्) निवृत्ता ?

ताण्ड्यायनः—भगवन् ! निवृत्ता सहैव चापेन ।

जामदग्न्यः—(स-सम्भ्रमम्) किमात्थ ? सहैव चापेन निवृत्ता—इति ?

ताण्ड्यायनः—अथ किम् ।

जामदग्न्यः—स्फुटं कथय तावत् किं वृत्तमिति ।

ताण्ड्यायनः—कस्यचिद्—

अखण्ड-चण्डिमोद्दण्ड-भुज-दण्ड-निपीडितम् ।
भगवन् भृगु-मार्तण्ड ! भग्नं भर्ग-शरासनम् ॥१॥

जामदग्न्यः—(सक्रोधम्) कस्य ?

ताण्ड्यायनः—

सुबाहु-मारीच-पुरःसरा अमी
निशाचराः कौशिक-यज्ञ-घातिनः ॥
वशे स्थिता यस्य—

जामदग्न्यः—अलम् । अतः परं ज्ञातः खलु खलानामग्रणीर् निशाचर-ग्रामणीः ।

ताण्ड्यायनः—(स्वगतम्) कथं दश-कण्ठेन धनुर्भग्नमिति प्रतीतं भगवता ? भवतु तावत् ।

जामदग्न्यः—(सक्रोधम्) अनुचितमुदासितुमेतस्मिन् कृतागसि रक्षसि । तदिदानीं—

दक्षिणस्याम्बुधेर्मध्ये कृत्वा कोङ्कणमष्टमम् ।
मद्बाण-जन्मा दहनो लङ्कातङ्काय जायताम् ॥२॥

(इति साटोपं परिक्रामति)

ताण्ड्यायन —(स्वगतम्) दिष्ट्या स्वस्ति क्षत्रियकुलाय।

(नेपथ्ये)

अहो नियोगिन ! कृत-विवाह-मङ्गलयो सीता-रामचन्द्रयो स्वस्ति-वाचनिका द्विजा आहूयन्ताम् ।

जामदग्न्य —(परिवृत्य सक्रोधम्) आ ब्रह्म-बन्धो ! कथमलीक-दश-कण्ठ-कीर्त्ति-दानेन प्रतारितोऽस्मि ! नन्वयमन्य कोऽपि जनक-जामाता ।

ताण्ड्यायन —भगवन् ! मम को वापराध ? अर्धोक्त एव भगवता भ्रान्तम् । मयापि सभ्रान्तम् ।

जामदग्न्य —तन्नि शेष तावत् कथय ।

ताण्ड्यायन —

शराग्र-वर्तिन ।

प्रताप-लेशस्य गता पराभवम् ॥३॥

जामदग्न्य —क पुनरय मारीच-दमन ?

ताण्ड्यायन —

ये ऋष्य-शृङ्ग-चरु-भाग-भुव कुमारा
सजज्ञिरे दशरथस्य वधू-जनेन ।
तेषामय निरुपम प्रथम कुमारो
रामाभिध कुशिकराज-तनूज-शिष्य ॥४॥

जामदग्न्य —(क्षण विभाव्य सामर्षम्)

दुर्धर्षा सुर-सिद्ध-किन्नर-नरैस्, त्यक्त-क्रम, वक्रता
प्राप्ते यत्र विधातरीव तरसा तिस्रोऽपि दग्धा पुर ।
तद् भग्न यदि राघवेण शिशुना चण्डी-पते कार्मुक

ताण्ड्यायन—(स्वगतम्) किमधुना वक्ष्यति ?

जामदग्न्य—

तन् मग्न कुलमेव तर्कय रघोर् मच्छस्त्र-धाराम्भसि ॥५॥

ताण्ड्यायन—सरब्धोऽय भगवान् । तमिमं वृत्तान्तमुपाध्यायस्य कथयामि ।

(इति निष्क्रान्त)

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

आटोप, अल, उपनीत, दुर्ललित, ग्रामणी., रक्षसि, दिष्ट्या, स्वस्ति, नियोगिन , सम्भ्रान्तम्, अम्भस् ।

(२) 'हुआ' अर्थ को प्रकट करने वाले सस्कृत शब्द लिखो ।

(२)

(१) सधि करो—

द्विजा + आहूयन्ताम्, ननु + अयम्, अर्थ + उक्ते + एव, रघो + मत् + शस्त्रधारा + अम्भसि ।

(२) समास करो—

कन्याया दानम्, कृत आग येन स ।

(३) समास-विग्रह करो—

भुज-दण्ड-निपीडितम्, कृत-विवाह-मङ्गलयो , रामाभिव , त्यक्त-क्रम, शस्त्र-धाराम्भसि ।

(४) कर्तृवाच्य का भूत-कृदन्त कैसे बनाया जाता है ? भूत-कृदन्त के पांच उदाहरण लिखो ।

वृद्ध-द्विज प्राह—

घटो जन्म-स्थान, मृग-परिजनो, भूर्ज-वसनो
वने वास, कन्दादिकमशनमेवविध-गुण ।
अगस्त्य पाथोधि यदकृत कराम्भोज-कुहरे
क्रिया-सिद्धि सत्त्वे भवति महता नोपकरणे ॥१॥

ततो राजा बहु-मूल्यान् षोडश-मणीस् तस्मै ददौ । ततस् तत्पत्नी प्राह—अम्ब ! त्वमपि पठ ।

देवी पठति—

रथस्यैक चक्र, भुजग-यमिता सप्त-तुरगा
निरालम्बो मार्गश्, चरण-विकल सारथिरपि ।
रविर्यात्येवान्त प्रतिदिनमपारस्य नभस
क्रिया-सिद्धि सत्त्वे भवति महता नोपकरणे ॥२॥

राजा तुष्ट सप्त-रथाश्च तस्मै ददौ । ततो विप्र-पुत्र प्राह—विप्र-सुत ! त्वमपि पठ ।

विप्र-सुत पठति—

विजेतव्या लङ्का, चरण-तरणीयो जल-निधिर्,
विपक्ष पौलस्त्यो रण-भुवि सहायाश्च कपय ।
पदातिर्मर्त्योऽसौ सकलमवधीद् राक्षस-कुल
क्रिया-सिद्धि सत्त्वे भवति महता नोपकरणे ॥३॥

तुष्टो राजा विप्र-सुतायाष्टादश-गजेन्द्रान् प्रादात् । तत सुकुमार-मनोज्ञा विप्र-स्नुषा वीक्ष्य नून भारत्या काऽपि लीला-कृतिरियम्—इति चेतसि नमस्कृत्य राजा प्राह—मातस् ! त्वमप्याशिष वद ।

विप्र-स्नुषा प्राह—देव ! शृणु—

धनु पौष्प, मौर्वी मधुकर-मयी चञ्चल-दृशा,
दृशा कोणो वाण , सुहृदपि जडात्मा हिम-कर. ॥
स्वय चैकोऽनङ्ग , सकल-भुवन व्याकुलयति ।
क्रिया-सिद्धि सत्त्वे भवति महता नोपकरणे ॥४॥

चमत्कृतो राजा लीलादेवी-भूषणानि सर्वाण्यादाय तस्यै ददौ । अनर्घ्यान् सुवर्ण-मौक्तिक-वैदूर्य-प्रवालान् च प्रददौ ।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ वताओ—

सत्त्वे, उपकरणे, अशन, चक्र, यमिता , विकल , सहाया , पदाति ।

(२) मूल्यवान् धातुओ और रत्नो के नाम लिखो ।

(३) सूर्य और समुद्र के जितने पर्याय वता सको वताओ ।

(२)

(१) समास-विग्रह करो—

विद्वत्कुटुम्व, जन्म-स्थान, पाथोधि, भुजग-यमिता , चरणविकल·, प्रतिदिनम्, जडात्मा, हिमकर , अनङ्ग ।

(२) व्युत्पत्ति करो (उपसर्ग, धातु या शब्द, प्रत्यय आदि अलग-अलग वताओ)—

गरीयसी, पौलस्त्य , पौष्प, अनर्घ्यान्, सिद्धि , वृद्ध , स्थानम्, वास , विजेतव्या ।

(३) संधि-विच्छेद करो—

मणीस् तस्मै, ततस्तत्, रविर्यात्येवान्त, सहायाश्च, चैकोनङ्ग , सर्वाण्यादाय, अनर्घ्यांश्च ।

(४) परस्मैपद धातु से वर्त्तमान कृदन्त कैसे वनाया जाता है ? वर्त्तमान कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो ।

(५) ११ से २० तक की गिनती लिखो ।

(३)

(१) सस्कृत रूपान्तर लिखो—
दोनो, पहला, चौथा, छठा, दसवां, वारहवां, वीसवां, सौवां ।

(२) विप्र-पुत्र ने जो श्लोक कहा उसका भाव सस्कृत में लिखो ।

(४)

(१) चारो समस्यापूर्त्तियां पूर्त्ति करनेवालो के अनुरूप हैं । किस प्रकार ?

(२) राजा भोज के सवध में आप क्या जानते हैं ?

(३) अगस्त्य कौन थे ? उनके सवध की क्या-क्या कथाऐं आपको ज्ञात हैं ?

(४) 'गरीयसी शारदा-प्रसाद-पद्धति' और 'भारत्या कापि लीला-कृतिरियम्' इन वाक्यो का भाव समझाओ ।

(५) क्रिया सिद्धि सत्त्वे भवति महता नोपकरणे—इस उक्ति को लेकर छोटा-सा निवन्ध लिखो ।

(६) उपर्युक्त उक्ति का समर्थन करनेवाली जो कथाऐं या घटनाऐं जानते हो, उनको लिखो ।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ **भोज-प्रबध**—सस्कृत टीका, जीवानन्द कृत ।

२. **भोज-प्रबध**—हिन्दी टीका (चौखभा सस्कृत सीरीज, बनारस)।

३. **बाल-भोज-प्रबध**—(इडियन प्रेस, इलाहाबाद) ।

: १३ :

कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः

(बुद्धचरितात्)

[बौद्ध धर्म में अश्वघोष का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे सम्राट् कनिष्क के समकालीन थे। कनिष्क के समय बौद्ध विद्वानो की जो सगीति (महासभा) एकत्र हुई थी, उसका सचालन अश्वघोष की अध्यक्षता में हुआ था।

बौद्ध धर्म के विद्वान् और महान् दार्शनिक होने के साथ-साथ अश्वघोष उच्च कोटि के कवि भी थे। उनने दो महाकाव्य लिखे। बुद्ध-चरित में भगवान् बुद्ध का चरित्र वर्णित किया गया है। इसमें २८ सर्ग थे पर इस समय १४ ही उपलब्ध हैं। इसके अनुवाद चीनी तथा तिब्बती भाषाओ में हुए जो पूरे उपलब्ध हैं। उनका दूसरा काव्य सौन्दरानन्द है जिसमें बुद्ध के सौतेले भाई नन्द और उसकी पत्नी सुन्दरी की कथा है। इसमे १८ सर्ग हैं। इन काव्यो के अतिरिक्त अश्वघोष ने नाटक भी लिखे थे।

अश्वघोष के काव्य की विशेषता उसका प्रसाद गुण है। शैली सर्वत्र स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण है। इन काव्यो की रचना में कवि का उद्देश्य रोचक शैली में बौद्ध धर्म के सिद्धातो का प्रतिपादन करना था। अपने इस उद्देश्य में कवि को पूरी सफलता मिली है। रूखे दार्शनिक तत्त्वो को घरेलू परिचित उदाहरणो के द्वारा समझाने में वह खूब ही सफल हुआ है।

सकलित अश बुद्ध-चरित से लिया गया है। इसमें बडे ओजस्वी शब्दो में यह कहा गया है कि पीछे आनेवाले अपने पूर्वजो से बढकर हो सकते है और हुए हैं, पूर्वज जो काम नही कर सके वह काम वशजो ने कर

दिखाया है, 'समाज मे जो यह भावना घर किये हुए है कि पहले जो कुछ हो गया, वैसा अव नही हो सकता, अव गिरने के दिन है, चढने के नहीं' वह विल्कुल निराधार है, सुवर्ण-युग अतीत मे ही नही भविष्य में भी हो सकता है, यह अश्वघोप का क्रातिकारी सदेश है जो प्रत्येक नवयुवक के मनन करने योग्य है ।]

(१)

यद् राज-शास्त्र भृगुरङ्गिरा वा
न चक्रतुर् वश-करावृपी तौ ।
तयो सुतौ तौ च ससर्जतुस् तत्
कालेन शुक्रश्च वृहस्पतिश्च ॥

(२)

सारस्वतश् चापि जगाद वेद
नष्ट पुनर् य ददृशुर्न पूर्वे ।
व्यासस् तथैन वहुधा चकार
न य वसिप्ठ कृतवान्न शक्ति ॥

(३)

वाल्मीकि-नादश्च ससर्ज पद्य
जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षि ।
चिकित्सित यच्च विवेद नात्रि
पश्चात् तदात्रेय ऋषिर्जगाद ॥

(४)

यच्च द्विजत्व कुशिको न लेभे
तद् गाधिन सूनुरवाप राजन् !

वेला समुद्रे सगरश्च दध्रे
नैक्ष्वाकवो यां प्रथम बबन्धुः ॥

(५)

आचार्यक योग-विधौ द्विजाना-
मप्राप्तमन्यैर् जनको जगाम ।
ख्यातानि कर्माणि च यानि शौरे.
शूरादयस् तेष्वबला बभूवुः ॥

(६)

तस्मात् प्रमाणं न वयो न काल.
कश्चित् क्वचिच्छ्रैष्ठ्यमुपैति लोके ।
राज्ञामृषीणा च हितानि तानि
कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः ॥

अभ्यास

(१)

(१) अर्थ लिखो—

चक्रतु, कालेन, जगाद, जग्रन्थ, विवेद, अवाप, वेला, दध्रे, आचार्यक, शौरि प्रमाण, पूर्वै ।

(२) समानार्थक शब्द लिखो—

राजशास्त्र, द्विजत्व, ख्यातानि, अबलाः ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

पुनर्यम्, तथैन, कृतवान्स, यच्च, तेष्वबला· ।

(२) समास करो—

तयो सुतौ, शुक्रश्च बृहस्पतिश्च, महान ऋषि, गाधिन सूनु ।

(३) समास-विग्रह करो—

वश-करी, योग-विश्री, द्विजाना, अप्राप्त, अवज्ञा ।

(४) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—

वाल्मीकि, सारस्वत, चिकित्सित, आत्रेय, कृतवान्, द्विजत्व, ऐक्ष्वाकव, ख्यातानि, शौरे श्रेष्ठयम् ।

(५) भविष्यत्-कृदन्त किस प्रकार बनता है ? भविष्यत्कृदन्त के ५ उदाहरण लिखो

(६) रूप लिखो—

भृगु—षष्ठी विभक्ति, अंगिरस्—सप्तमी विभक्ति, बृहस्पति—तृतीया विभक्ति, कृ धातु—लङ् अन्यपुरुष, सृज् धातु—लृट् उत्तम-पुरुष, विद् धातु—लट्, मध्यमपुरुष ।

(३)

(१) इस पाठ का सार अपने शब्दो में लिखो ।

(२) परोक्षभूत की क्रियाओ को अनद्यतन-भूत की क्रियाओ में परिवर्तित करो ।

(४)

(१) इस पाठ से क्या शिक्षा मिलती है ?

(२) जो कार्य पूर्वज नही कर सके, उन्हे पीछे आनेवालो ने किया इसके समर्थन में कुछ और उदाहरण दो ।

(३) बाप से बेटा बडा—यह कहावत कहाँ तक सार्थक है ? उदाहरण देकर अपने पक्ष का समर्थन करो ।

(४) 'पहले जो कुछ हो गया, वैसा अब नही हो सकता'—इस कथन

की सत्यता की परीक्षा करो। उन्नति का कारण काल है या और कुछ ? यदि और कुछ है तो वह क्या है ?

(५) इस पाठ मे जिन ऋषियो और राजाओ के नाम आये हैं, उनकी कथाएँ, रामायण, महाभारत अथवा पुराणो में पढो।

विशेष पठन के लिए सामग्री

१. **बुद्ध-चरित**—जान्स्टन सपादित।

२. **बुद्ध-चरित**—अंग्रेजी भाषान्तर, जान्स्टन कृत।

३. **बुद्ध-चरित**—हिन्दी अनुवाद, सूर्यनारायण चौधरी कृत।

४ **चन्द्रधर शर्मा गुलेरी**—गुलेरी-ग्रथ, भाग १, च्यवन ऋषि का रामायण नामक निवन्ध (ना प्र. सभा)।

पराक्रमी बाल.

(उत्तर-रामचरितात्)

[मस्कृत नाटककारो में भवभूति का नाम कालिदास के साथ ही लिया जाता है। वे कन्नौज के राजा यशोवर्मा के समय मे हुए जिसका समय विक्रम की आठवीं शताब्दी है। एक अन्य मतानुसार भवभूति ही उम्बेकाचार्य थे, जो मीमासा के प्रसिद्ध विद्वान् और कुमारिलभट्ट के शिष्य थे।

भवभूति को अपने जीवन-काल मे उपयुक्त साहित्यिक सम्मान नहीं मिला। इस विषय मे उनका यह श्लोक प्रसिद्ध है—

ये नाम केचिदिह न प्रथयन्त्यवज्ञा
जानन्तु ते किमपि, तान् प्रति नैप यत्न।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समान-धर्मा
कालो ह्यय निरवधिर्विपुला च पृथ्वी॥

भवभूति के तीन ग्रथ मिलते हैं—१ उत्तररामचरित, २ महावीरचरित, ३ मालती-माधव। ये तीनो ही नाटक हैं। मालती-माधव की कथा कवि-कल्पित है। महावीर-चरित राम के चरित को लेकर लिखा गया है। तीनो मे श्रेष्ठ उत्तररामचरित है, जिसमे सीता-वनवास से आरम्भ करके राम का पिछला चरित्र वर्णित है। कथा वाल्मीकीय रामायण की है पर कवि ने उसमे पर्याप्त फेर-फार किया है। रामायण की कथा दु खात है, पर सस्कृत नाटको की प्रथानुसार कवि ने उसे सुखान्त बना दिया है—सीता और राम के सयोग के साथ नाटक की समाप्ति होती है।

उत्तररामचरित करुण-रस-प्रधान नाटक है। करुण रस का चित्रण करने मे भवभूति अद्वितीय है। भाषा पर कवि का अपूर्व अधिकार है।

मस्कृत की एक उक्ति के अनुसार उत्तररामचरित मे भवभूति कालिदास से भी वढ जाते है —

उत्तरे राम-चरिते भवभूतिर्विशिष्यते ।

सकलित अश उत्तररामचरित के चतुर्थ अक से उद्धृत किया गया है। उसमे वचपन से ही पराक्रमी वालक लव की तेजस्विता का प्रभावशाली चित्रण हुआ है ।]

वटव·—(प्रविश्य सभ्रान्ता) कुमार ! अश्वोऽश्व इति कोऽपि भूत-विशेषो जनपदेपु श्रूयते, सोऽयमधुनास्माभिः प्रत्यक्षीकृत ।

लव —अश्व इति पशु-समाम्नाये साङ्ग्रामिके च पठ्यते तद् ब्रूत कीदृश ?

वटव:—श्रूयताम्—

पश्चात् पुच्छ वहति विपुल, तच्च धूनोत्यजस्र,
दीर्घ-ग्रीव स भवति, खुरास् तस्य चत्वार एव ।
शष्पाण्यत्ति, प्रकिरति शकृत्-पिण्डकानाम्र-मात्रान्,
कि वाख्यातैर् व्रजति स पुनर् दूरमेह्येहि याम· ॥१॥

[इति उपसृत्याजिने हस्तयोश्चाकर्षन्ति]

वटव —पश्यतु कुमारस् तदाश्चर्यम् ।

लव —दृष्टमवगत च नूनमाश्वमेधिकोऽयमश्व इति ।

वटव —कथ ज्ञायते ?

लव.—ननु मूर्खा ! पठितमेव युष्माभिस् तत्काण्डे । कि न पश्यथ, प्रत्येक शत-सख्या: कवचिनो दण्डिनो निषङ्गिणश्च रक्षितारस् तत्प्रायमेव वलमिदमपि दृश्यते । यदि इह न प्रत्ययस् तद् गत्वा पृच्छत ।

वटव —भो ! भो ! किम्प्रयोजनोऽयमश्व परिवृत पर्यटति ।

लव —(सस्पृहमात्मगतम्) अये ! अश्वमेध इति विश्व विजयिना क्षत्रियाणामूर्जस्वल सर्व-क्षत्रिय-परिभावी महान् उत्कर्ष-निकष: ।

[नेपथ्ये]

अयमश्व: पताकेयमथवा वीर-घोषणा ।
सप्तलोकैक-वीरस्य दशकण्ठ-कुल-द्विष ॥२॥

लव —(सव्ययमिव) अहो ! सदीपनानि अक्षराणि।

वटव —किमुच्यते ? प्राज्ञ खलु कुमार ।

लव —भो भो ! तत् किमक्षत्रिया पृथ्वी यदेवमुद्धतमुद्घोष्यते !

[नेपथ्ये]

अरे ! महाराज प्रति कुत क्षत्रिया ?

लव —धिग् जाल्मान्—

यदि नो सन्ति सन्त्वेव, केयमन्या विभीषिका ।
किमुक्तै, सनिपत्यैव पताका वो हराम्यहम् ॥३॥

भो. ! भो ! वटव ! परिवृत्य लोष्ठैरभिघ्नन्तो नयत एनमश्वम् । एष रोहितानां मध्ये वराकश्चरतु ।

[प्रविश्य सक्रोधदर्प पुरुष [

धिक् चापलम् । किमुक्तवानसि ! तीक्ष्ण-नीरसा ह्यायुधीय-श्रेणय शिशोरपि दृप्ता वाच न सहन्ते । राजपुत्रश् चन्द्रकेतुररि-मर्दन सौम्य-पूर्वारण्य-दर्शन-कौतूहलाक्षिप्त-हृदयो न यावदायाति तावत् त्वरितमनेन तरु-गहनेनापसर्पत ।

वटव.—कुमार ! कृतमनेनाश्वेन, तर्जयन्ति विस्फुरित-शस्त्रा कुमारमायुधीय-श्रेणयः, दूरे चाश्रमपदमितस्, तदेहि हरिण-प्लुतं पलायामहे ।

लव —(स्मित कृत्वा) किं नाम विस्फुरन्ति शस्त्राणि ?

[धनुरारोपयति]

अभ्यास

(१)

(१) शब्दार्थ लिखो—

सम्भ्रान्ता, साङ्ग्रामिक, ऊर्जस्वल, निकष, जाल्म, विभीषिका, रोहित, वराक, आयुधीय ।

(२) जितने आयुधो के नाम बता सको, बताओ ।

(३) अश्व के अधिक-से-अधिक पर्याय शब्द बताओ ।

(२)

(१) संधि-विच्छेद करो—

अश्वोऽश्व, एह्येहि, सनिपत्यैव, वराकश्चरतु ।

(२) समास-विग्रह करो—

दीर्घग्रीव, शत-सख्या, किंप्रयोजन, राज-पुत्र ।

(३) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—

साङ्ग्रामिक आश्वमेधिक, कवचिन, निषगिण, चापल, रक्षितार, सदीपनानि, सनिपत्य, अभिघ्नन्त, उक्तवान्, दृप्ता ।

(४) ये रूप किस धातु के, किस काल के और किस वचन के हैं—

अत्ति, धूनोति, पर्यटति, उद्घोष्यते, विस्फुरन्ति ।

(३)

(१) वटुओ ने घोडे का जो वर्णन किया उसे अपने शब्दो में लिखो ।

(२) श्लोक १ की प्रथम और तृतीय पंक्तियों का वाच्य-परिवर्तन करो।

(४)

(१) लव के चरित्र की विशेषताएँ बताओ।

(२) इस पाठ में हास्य और वीर रसों की व्यंजना करनेवाले अंशों को बताओ।

(३) अश्वमेध यज्ञ क्यों किया जाता था? कैसे किया जाता था? किसी और अश्वमेध की कथा जानते हो? उसे किसने किया था?

(४) इस नाट्यांश का अभिनय करो।

(५) वाल्मीकि-रामायण में लव-कुश की कथा पढ़ो। वह इस नाटक की कथा से किस प्रकार भिन्न है? (तुलसीकृत रामायण का एक क्षेपक लव-कुश कांड है, उसकी कथा नाटक की कथा से मिलती है।)

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ उत्तर-रामचरित नाटक—संस्कृत।

२ उत्तर-रामचरित—English Notes and Translation by C Sankara Rama Sastri

३ उत्तर-रामचरित—हिन्दी अनुवाद, कविरत्न सत्यनारायण कृत।

४. कालिदास और भवभूति—द्विजेंद्रलाल राय।

: १५ :

सुभाषितानि (२)

श्रूयता धर्म-सर्वस्व, श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम् ।
आत्मन प्रतिकूलानि परेषा न समाचरेत् ॥१॥

सार सार समुद्धृत्य व्यासस्य वचन-द्वयम् ।
परोपकार. पुण्याय, पापाय परपीडनम् ॥२॥

सत्यान् नास्ति परो धर्मो नानृतात् पातक परम् ।
न च वेदात् पर शास्त्र नास्ति मातृ-समो गुरुः ॥३॥

सर्वं पर-वश दु ख, सर्वमात्म-वश सुखम् ।
एतद् विद्यात् समासेन लक्षण सुख-दु खयोः ॥४॥

एकेनापि सु-वृक्षेण पुष्पितेन सु-गन्धिना ।
वन सु-वासितं सर्वं सु-पुत्रेण कुल यथा ॥५॥

यत्र विद्वज्जनो नास्ति, श्लाघ्यस्तत्राल्प-धीरपि ।
निरस्त-पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते ॥६॥

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता. ।
शोचन्ति जामयो यत्र, विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥७॥

नालसा. प्राप्नुवन्त्यर्थं, न क्लीवा न च मानिन. ।
न च लोक-रवाद् भीता, न च शश्वत्-प्रतीक्षिण. ॥८॥

श्रेयान् स्व-धर्मो विगुण , पर-धर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्व-धर्मे निधन श्रेय., पर-धर्मो भयावह. ॥९॥

उद्धरेदात्मनात्मान, नात्मानमवमादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन ॥१०॥

आपदा कथित पन्था इन्द्रियाणामसयम ।
तज्जय सपदा मार्गो, येनेष्ट तेन गम्यताम् ॥११॥

न जातु काम कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्ण-वर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ॥१२॥

अतिथिर् यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते ।
स तस्मै दुष्कृत दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥१३॥

मनस्वी म्रियते काम, कार्पण्य न तु गच्छति ।
अपि निर्वाणमायाति नानलो याति शीतताम् ॥१४॥

कुसुम-स्तवकस्येव द्वे वृत्ती तु मनस्विन ।
मूर्ध्नि वा सर्व-लोकस्य, विशीर्येत वनेऽथवा ॥१५॥

सूतो वा सूत-पुत्रो वा यो वा को वा भवाम्यहम् ।
दैवायत्त कुले जन्म, मदायत्त तु पौरुषम् ॥१६॥

एकेनापि सु-पुत्रेण सिंही स्वपिति निर्भयम् ।
सहैव दशभिर् पुत्रैर् भार वहति रासभी ॥१७॥

उदेति सविता ताम्रस्, ताम्र एवास्तमेति च ।
सपत्तौ च विपत्तौ च महतामेक-रूपता ॥१८॥

वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि ।
लोकोत्तराणा चेतासि को नु विज्ञातुमर्हति ॥१९॥

जननी जन्म-भूमिश्च जाह्नवी च जनार्दन ।
जनक पञ्चमश्चैव जकारा पञ्च दुर्लभा ॥२०॥

अभ्यास

(१)

(१) **शब्दार्थ लिखो—**

समासेन, श्लाघ्य, निरस्त, द्रुमायते, जामय, स्वाद्, कृष्णवर्त्मा, निर्वाण, स्तवक, आयत्त, लोकोत्तराणा ।

(२) वृक्ष और जल के जितने नाम बता सको बताओ ।

(२)

(१) **सन्धि-विच्छेद करो—**

नार्यस्तु, स्वनुष्ठितात्, आत्मनात्मान, आत्मैव, पञ्चमञ्चैव ।

(२) **समास-विग्रह करो—**

सुख-दु खयो, अल्पधी, भग्नाश, मदायत्त, लोकोत्तराणा ।

(३) **शब्द-रूप लिखो—**

आत्मन्—द्वितीया मे, श्रेयस्—प्रथमा मे, मातृ—षष्ठी म, मूर्धन्—द्वितीया में, प्रतीक्षिन्—तृतीया मे, तत्—सप्तमी में ।

(४) **धातु-रूप लिखो—**

श्रु—लट् अन्यपुरुष, मृ—लिङ् अन्यपुरुष, विद्—लोट् मध्यमपुरुष, स्वप्—लृट् उत्तमपुरुष, प्र+आप्=प्राप्—लङ् उत्तमपुरुष, वि+ज्ञा—लट् मध्यमपुरुष ।

(५) **ये रूप किस धातु के हैं ? व, वचन और पुरुष का निर्देश भी करो—**

उदेति, एति, श्रूयताम्, ॥

(६) प्रश्न ५ में

(३)

(१) पद्य १४ और १७ का वाच्य-परिवर्तन करो।

(२) मनस्वी पुरुष के विषय में संस्कृत में पाँच वाक्य लिखो।

(४)

(१) धर्म का सार आपकी समझ में क्या है ?

(२) सूतो वा सूतपुत्रो वा—यह उक्ति किस की है ? उसके पौरुष के विषय में क्या जानते हो ?

(३) आत्मैव आत्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन—इस उक्ति के भाव को बढाकर लिखो।

(४) जननी और जन्मभूमि का महत्त्व बताने वाली और उक्तियां याद हो तो लिखो।

: १६ :

शुकनासोपदेशः

(कादम्बरीतः)

[महाकवि वाणभट्ट एकमत से सस्कृत के सर्वश्रेष्ठ गद्य-लेखक है। वे कन्नौज के अधिपति सम्राट् हर्षवर्धन की राजसभा मे रहते थे जिसका शासनकाल स ६६३ से स ७०५ है।

वाणभट्ट की दो गद्य-रचनाएँ प्रसिद्ध है—१ हर्षचरित २ कादम्बरी। हर्षचरित में सम्राट् हर्ष के चरित्र का वर्णन किया गया है। आनुषगिक रूप से स्वय कवि का चरित्र भी वर्णित हुआ है। कादम्बरी एक गद्यकाव्यात्मक कथा है। सस्कृत के साहित्यिक गद्य की वह सर्वोत्कृष्ट कृति है। उसके वर्णन वडे ही सजीव और मनोरम है। भाषा पर कवि का अद्भुत अधिकार है।

सकलित अश कादम्बरी से लिया गया है। राजकुमार चन्द्रापीड विद्या प्राप्त कर गुरु-कुल से लौटा है और अव उसका यौवराज्याभिषेक होने जा रहा है। इस अवसर पर उसके पिता का मत्री शुकनास उसे उपदेश देता है। यह उपदेश कादम्बरी के सर्वश्रेष्ठ अशो मे से है। इसमें उपदेश-कर्ता के मानव-प्रकृति के ज्ञान का अच्छा परिचय मिलता है। इसके लक्ष्मी-निन्दा प्रकरण को यहाँ उद्धृत किया गया है।]

आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्।

इय हि लक्ष्मीर् लब्धापि खलु दु खेन परिपाल्यते। दृढ-गुण-सदान-निष्पन्दीकृतापि नश्यति। पञ्जर-विधृताप्यपक्रामति। परिपालितापि प्रपलायते। न परिचय रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न शील पश्यति। न वैदग्ध्य गणयति। न धर्म-मनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं

पालयति । न सत्यमनुबुध्यते । गन्धर्व-नगर-लेखेव पश्यत एव नश्यति । अति-प्रयत्नविधृतापि परिस्खलति ।

जन गुणवन्त अपवित्रमिव न स्पृशति । उदारसत्त्वम् अमङ्गलमिव न बहु मन्यते । सुजनम् अनिमित्तमिव न पश्यति। अभिजातम् अहिमिव लङ्घयति । शूर कण्टकमिव परिहरति। दातार दुस्वप्नमिव न स्मरति । विनीत पातकिनमिव नोप-सर्पति । मनस्विनम् उन्मत्तमिवोपहसति ।

न हि गर्वविधम् अपरिचितम् इह जगति किञ्चिदस्ति यथा इयमनार्या । न हि न पश्यामि योऽपरिचितयानया न निर्भरमु-पगूढ यो वा न विप्रलब्ध । अनया दुराचारया कथमपि दैव-वशेन परिगृहीता विक्लवा भवन्ति राजान, सर्वाविनयाधिष्ठानता च गच्छन्ति । दर्शन-प्रदानमपि अनुग्रह गणयन्ति । दृष्टि-पातमपि उपकार-पक्षे स्थापयन्ति। सभाषणमपि सविभाग-मध्ये कुर्वन्ति। आज्ञामपि वर-प्रदान मन्यन्ते । स्पर्शमपि पावनमाकलयन्ति।

मिथ्या-माहात्म्य-गर्व-निर्भराश् च न प्रणमन्ति देवताभ्य । न पूजयन्ति द्विजातीन् । न मानयन्ति मान्यान् । नार्चयन्ति अर्च-नीयान् । नाभिवादयन्ति अभिवादनार्हान् । नाऽभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून्। उपहसन्ति विद्वज्जनम् । जरा वैक्लव्य-प्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम् । आत्म-प्रज्ञा-परिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय। कुप्यन्ति हितवादिने ।

सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, त पार्श्वे कुर्वन्ति, त सवर्धयन्ति, तस्मै ददति, तस्य वचन शृण्वन्ति, त बहु मन्यन्ते, त आप्ततामापादयन्ति योऽहर्निशम् उपरचिताञ्जलिर् अधिदैव-

तमिव विगतान्य-कर्त्तव्य. स्तौति यो वा माहात्म्यमुद्भावयति ।

अभ्यास

(१)

(१) शब्दो के अर्थ लिखो—

कल्याणाभिनिवेशी, गुण-मदान, अभिजन, दुःस्वप्न, उपसर्पति, अनार्या, उपगूढ, विप्रलब्ध, परिगृहीता, विवलवा, मविभाग, निर्भग, वैक्लव्य, असूयन्ति, आप्तताम्, अधिदैवतम् ।

(२) नही ठहरती—इस भाव को मस्कृत मे जितने प्रकार मे प्रकट कर मको, प्रकट करो ।

(३) अनुरुध्यते और अनुबुध्यते मे अन्तर बताओ ।

(२)

(१) समास-विग्रह करो—

दृढ-गुण-मदान-निष्पन्दीकृता, पञ्जर-विधृता, उदारसत्त्वम्, अमङ्गलम्, अनार्या, दुराचारा, अविनयाधिष्ठानता, मिथ्या-माहात्म्य-गर्व-निर्भग, विगतान्य-कर्त्तव्य ।

(२) प्रकृति-प्रत्यय बताओ—

लब्धा, अपरिचित, उपगूढ, अधिष्ठान, प्रदान, पात, मान्य, पातकिन्, माहात्म्य, वैक्लव्य ।

(३) रूप लिखो—

नश्—लट् उत्तमपुरुष, आ+दृ—लट् अन्यपुरुष, दृश्—लोट् मध्यमपुरुष, मन्—लङ अन्यपुरुष, उत्+स्था=उत्था—लट् मध्यमपुरुष, दा—लट् अन्यपुरुष ।

(३)

(१) लक्ष्मी के दोषो का वर्णन अपने शब्दो मे करो ।

(२) वाच्य-परिवर्त्तन करो—

न परिचय रक्षति · ··· · न सत्यमनुबुध्यते।
जन गुणवन्त · ·· उन्मत्तमिवोपहसति।

(४)

(१) इस गद्याश की भाषा-शैली की विशेषताएँ बताओ।
(२) धन के अभिमान मे फूले हुए पुरुषो के चरित्र का वर्णन करो।
(३) शुकनास के उपदेश को कादबरी के हिन्दी अनुवाद मे पूरा पढो।
(४) गधर्व-नगर किसे कहते है ?

विशेष पठन के लिए सामग्री

१ कादम्बरी, सस्कृत, भानुचद्र की टीका (निर्णयसागर प्रेस, बबई)।
२ कादम्बरी, अग्रेजी नोट सहित, काणे कृत।
३ कादम्बरी—सस्कृत-हिन्दी टीका (चौखभा सस्कृत सीरीज, बनारस)।
४ कादम्बरी, हिन्दी अनुवाद, ऋषीश्वरनाथ भट्ट कृत (भारती-भडार, इलाहाबाद)।
५ कादम्बरी-कथासार—गदाधरसिंह कृत (इडियन प्रेस)
६ कादम्बरी (राजपाल एण्ड सस, दिल्ली)
७ हर्ष-चरित—वासुदेवशरण अग्रवाल।

: १७ :

कर्णस्यौदार्यम्

(कर्णभारात्)

[महाकवि भास मस्कृत के वहुत प्राचीन नाटककार हैं। कालिदास के समय तक वे पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुके थे। कालिदाम ने उनका नाम वडे आदर के माथ लिया है। वाण ने और राजशेखर ने भी भास की नाट्यकला की विशद प्रशमा की है। मूक्ति-मग्रहो मे भास के पद्य उद्धृत हुए हैं।

कराल-काल-वश भास के नाटक लुप्त हो गये। म १९६९ वि मे त्रिवेन्द्रम् के महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री ने तेरह नाटको को ढूंढ निकाला। इन सव नाटको की लेखन-शैली परस्पर वहुत मिलती है जिससे वे एक ही लेखक की रचना जान पडते हैं। इनमे से एक नाटक का नाम स्वप्न-नाटक है और उसमें वासवदत्ता की कथा है। शास्त्रीजी ने इसे भास का स्वप्नवासवदत्त नाटक मान कर वाकी को भी भास की रचनाएँ माना है। गणपति शास्त्री के इस मत को कई विद्वानो ने साधार माना और दूसरो ने निराधार।

इन तेरह नाटको मे प्रतिमा और अभिषेक ये दो रामायण की कथा को लेकर, पचरात्र, मध्यम-व्यायोग, कर्णभार, दूत-वाक्य, दूत-घटोत्कच और ऊरुभग ये छै महाभारत की कथा को लेकर, वालचरित कृष्ण-चरित्र को लेकर तथा दरिद्र-चारुदत्त, अविमारक, प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण और स्वप्न नाटक ये चार लोक-कथाओ को लेकर लिखे गये हैं।

नाट्यकला की कसौटी पर ये नाटक पूरी तरह खरे उतरते है। भाषा मर्वत्र अत्यन्त सरल, सुवोध और प्रवाहमयी है। वाक्य छोटे-छोटे है।